भावीवश एकबार दीर्घतमा ने कामवश होकर अपने छोटे भाई की पत्नि को छेड़ने का उपक्रम किया उसके मना करने पर रोने चिल्लाने पर उन्होंने यह निन्द्य कर्म नहीं छोड़ा उसका यह अपराध ऋषि शरद्वान से सहन नहीं हुआ। उन्होंने देखा कि दीर्घतमा अपने छोटे भाई की स्त्री जो पुत्रवधु के समान है उसके साथ समागम कर रहे हैं इस महान अधर्म को देख कर महात्मा शरद्वान को चिन्ता होने लगी, लेकिन उन्होंने दीर्घतमा ऋषि को फिर भी शाप नहीं दिया। उनके क्रोध से नेत्र लाल हो गये, और क्रोधित होकर दीर्घतमा से कहने लगे, अरे दुष्ट ! तू गम्य, अगम्य को कुछ भी नहीं जानता, पशु धर्म की तरह अपने छोटे भाई की स्त्री के साथ समागम करना चाहता है। अब मैं तुझको छोड़ता हूं तू अपने इस नीच कर्म का फल भोग। तुम अन्धे, वृद्ध और जीविका चलाने में असमर्थ होकर इतना नीच दुष्कर्म कर रहे हो जिसको कोई नहीं करता, तुम एक दुराचारी मनुष्य हो, अतः मैं तुमको इसी कारण घर से निकाल रहा हूँ। तुमने धर्म अधर्म का कुछ भी विचार नहीं किया है।

सूतजी बोले—हे ऋषियो ! इस कारण घर से निकलने के बाद दीर्घतमा क्रूर प्रकृति के हो गये, तब ऋषि शरद्वान ने उनकी बहुत बुराई की और अपने दोनों हाथों से पकड़ कर उसको सन्दूक में बन्द करके बह जाने के लिये समुद्र में डाल दिया एक सप्ताह तक समुद्र में तैरने के बाद, राजा बलि ने अपनी स्त्री सहित इस बहते हुये सन्दूक को देखा, उस समय वे डूबने जा रहे थे, लेकिन जल की ऊँची लहर ने उनको राजा बलि के पास पहुँचा दिया। विरोचन के पुत्र राजा बलि ने दीर्घतमा को समुद्र में से निकाल कर बचा लिया और अपने महलों में लेजाकर खाने पीने सभी प्रकार से सन्तुष्ट किया। बलि के इस व्यवहार से दीर्घतमा बहुत प्रसन्न हुये। और राजा बलि को वरदान देकर प्रसन्न करना चाहा। दैत्यराज बलि ने पुत्र की कामना से दीर्घतमा को प्रसन्न किया।

बलि ने कहा—हे श्रेष्ठ ऋषि ! मैं आपसे सन्तान प्राप्त करने

की इच्छा करता हूं आप मेरे लिये धर्म, अर्थ, और काम से युक्त पुत्रों की उत्पत्ति करें। बलि के इस प्रकार कहने पर दीर्घतमा ने कहा कि बहुत अच्छा, मैं आपकी आज्ञा का पालन करूँगा इसके बाद तब बलि राजा ने दीर्घतमा को अपनी रानी सुदेष्णा के पास भेज दिया। दीर्घतमा को अन्धो और वृद्ध देखकर रानी सुदेष्ण स्वयं दीर्घतमा के पास नहीं गई, और उन्होंने अपनी धाय को नाना तरह के वस्त्राभूषणों से सुसज्जित करके दीर्घतमा के पास भेज दिया। उस शूद्र योनि में वश्यात्मा दीर्घतमा ने कक्षीषान् और चक्षुष नाम के दो धर्मात्मा पुत्रों को पैदा किया। वे दोनों महान तेजस्वी थे. उन दोनो को अच्छी प्रकार पढ़ा लिखा कर ब्रह्मवेत्ता, योग परायण बना दिया, इन पुत्रों को देख कर विरोचन के पुत्र राजा बलि ने कहा कि ये दोनों क्या हमारे पुत्र हैं ? दीर्घतमा ने कहा कि ये युत्र तुम्हारे नहीं हैं, ये पुत्र हमारे हैं, क्यों कि तुम्हारे छदम से थे शूद्र योनि में पैदा हुए हैं। ये असुरों में श्रेष्ठ होंगे। तुम्हारी रानी सुदेष्णा ने मुझको अन्धा और वृद्ध समझ कर अपनी शूद्र वर्ण की धाय को भेज दिया था। दीर्घतमा की इस प्रकार बात सुनकर उनकी पुनः प्रार्थना आदि करके प्रसन्न किया। प्रताप शाली राजा बलि ने अपनी स्त्री सुदेष्णा की बड़ी भर्त्सना की, और फिर उन्हें वस्त्र आभूषण से सुसज्जित करके ऋषि दीर्घतमा के भेजा। दीर्घतमा ने सुदेष्णा से कहा कि हे सुन्दरि ! यदि तुम नग्न और खुले हुए शरीर में दही में नमक मिलाकर लगाओगी, और सिर से पैर तक बिना किसी घृणा के उस दही को चाटोगी, तो तुम्हारे मन के अनुसार तुम्हें पुत्र प्राप्त होंगे। बलि की स्त्री सुदेष्णा ने ऋषि की बात के अनुसार ही कार्य किया, लेकिन उनके शरीर के मलमार्ग के चाटने से उसे घृणा हुई, जिथ कारण उसने मलद्वार को छोड़ दिया। इस प्रकार देखकर ऋषि ने सुदेष्णा से कहा कि हे देवि ! तुम्हारे सबसे बड़ा पुत्र बिना अपान के पैदा होगा। ऋषि की ऐसी बात सुनकर रानी सुदेष्णा ने ऋषि से प्रार्थना की कि हे प्रभु ! आप मुझे इस प्रकार बिना अपान के पुत्र न देने की कृपा करें।

ऋषि ने कहा—हे सुन्दरि ! इसमें तो तम्हारा ही अपराध है.

अब यह झूठ नहीं हो सकता हे सद्व्रतपरायणे ! यदि तुम ऐसा अपना पुत्र नहीं चाहती हो, तो तुम्हारा पौत्र बिना अपान के होगा, तुम्हारा पौत्र बिना अपानमार्ग के भी सब कार्य करता रहेगा। इस प्रकार कहने के बाद ऋषि दीर्घतमा ने सुदेष्णा की कमर को हाथ से छूते हुए कहा कि हे सुन्दर हँसने वाली देवि ! तुमने मेरे समस्त शरीर के दही को जोभ से चाटा है, इस कारण तुम्हारा गर्भ पूर्णिमा के चांद की तरह पूर्णता को प्राप्त होगा; तुम्हारे इस गर्भ से देवताओं के समान पांच प्रतापशाली पुत्र पैदा होंगे। वे पांचों पुत्र धार्मिक, यज्ञपरायण और बहुत तेजस्वी होंगे। ऋषि दीर्घतमा के इस प्रकार वरदान देने पर बलि की स्त्री सुदेष्णा ने अङ्ग नाम के कुमार को उत्पन्न किया। उसके बाद उसने बंग को उत्पन्न किया, फिर कलिंग को फिर पुण्ड्र को तथा सबसे बाद में ब्रह्म नाम के पुत्र को पैदा किया। वंश को बढ़ाने वाले ये पांचों पुत्र बलि के क्षेत्रज पुत्र कह लाते थे। प्राचीन काल में दीर्घतमा ऋषि ने राजा बलि को ये ही पांचों पुत्र प्रदान किए थे। प्रजापति ब्रह्माजी ने दीर्घतमा ऋषि को शाप दिया था कि 'तुम अपनी स्त्रियों से सन्तान पैदा न करोगे। इन्हीं कारण उन्होंने मनुष्य योनि में सन्तान पैदा की और इसी कारण उनकी पत्नि से कोई सन्तान पैदा न हुई। ऋषि के इस गौधर्म से सन्तुष्ट होकर बृषभ ने इस प्रकार कहा, कि तुमने गौधर्म की मर्यादा का भली प्रकार पालन किया है, हे मुनि ! तुम्हारे शरीर में जो बृहस्पति के शाप के कारण पाप लगा है, मैं आज महान अन्धकार से तुमको मुक्त करता हूँ, मैं अपने नथुनों से सूँघ कर तुम्हारी वृद्धावस्था को और मृत्यु को भी दूर करता हूँ। इस प्रकार कहकर बृषभ ने अपने नथुनों से उनको सूँघ कर उनके सभी अन्धकार को दूर कर दिया, और उनको दिखाई देने लगा। इसके बाद उनके वरदान से वे दीर्घतमा दीर्घायु सम्पन्न युवा और नेत्रवान होगये। इसी कारण गौ के वरदान से दीर्घतमा गौतम कहलाये। इसके बाद शूद्र योनि से उत्पन्न कीक्षवान् ने अपने पिता के साथ पर्वतीय प्रदेश को प्रस्थान किया, पिता के हित के लिये उसने कठिन तपस्या की

पिता ने उन्हें जिस तपस्या करने के लिए कहा था। परम कठोर तपस्या करने के बाद कीत्सवान् ने परम सिद्धि प्राप्त की, और स्वयं और अपने भाई चक्षुष के पापों को नष्ट करके ब्राह्मणात्व को प्राप्त किया। कीत्सवान् के इस शुभ कर्म से उसके पिता बहुत सन्तुष्ट हुये। उसके पिता ने अपने पुत्र से कहा कि हे समर्थवान्! तुम्हारे जैसे योग्य पुत्र से मैं बहुत संतुष्ट हूँ। परम यशस्वी सत्पुत्र को प्राप्त करके मैं कृतार्थ होगया। इस प्रकार कहने के बाद महात्मा गौतम ने योग की साधना की। और ब्रह्म पद को प्राप्त किया। इधर कक्षीवान ने ब्राह्मणत्व प्राप्त करने के लिये हजारों पुत्रों की सृष्टि की। ये सभी पुत्र गौतम गोत्रीय कहे जाते हैं। अब बलि और दीर्घतमा की सन्तानों का वर्णन करूँगा सो आप लोग सुनिए—

राजा बलि अपने पांचों पुत्रों का राज्याभिषेक करके कृतार्थ हो गये। योगात्मा बलिराजा योग का आश्रय लेकर अपने समय को बिताने लगे। बलि के पांचों में राजर्षि अंगद का पुत्र दधिवाहन नाम का हुआ। उसका दूसरा नाम अनपाल था। अनपाल का पुत्र दिवि रथ हुआ। दिविरथ का पुत्र परमविद्वान राजा धर्मरथ हुआ। इसी धार्मिक राजा ने विष्णु पद नाम के पर्वत पर राजा इन्द्र के साथ सोमरस का पान किया था। धर्मरथ का पुत्र चित्ररथ हुआ। चित्ररथ के राजा दशरथ हुआ। इन्हीं राजा दशरथ का दूसरा नाम लोमपाद था इनकी पुत्री शान्ता थी! दशरथ का पुत्र चतुरंग था। वह राजा ऋष्यशृंग की कृपा से पैदा हुआ था। चतुरंग का पुत्र पृथुलाश्व हुआ। पृथुलाश्व का चम्प नामक पुत्र हुआ। चम्प की मालिनी नामक नगरी थी। उसका दूसरा नाम चम्पावती भी कहा जाता था। जिसमें चारों वर्ण के लोग रहते थे। उसमें उसने साठ हजार वर्षों तक राज्य किया। सभी प्रजा के लोग विष्णु भगवान के परम भक्त थे। पूर्णभद्र की कृपा से राजा चम्प का पुत्र हर्यंग हुआ। राजा हर्यंग के पास एक महाबलशाली हाथी था जिसका नाम 'तणिक' था। जो पूर्व जन्म में इन्द्र का ऐरावत था। उस राजा ने इस हाथी को अपने मन्त्र के बल से पृथ्वी पर बुलाया था राजा हर्यंग का उत्तराधिकारी राजा भद्ररथ हुआ।

भद्ररथ का पुत्र राजा वृहत्कर्मा हुआ। वृहत्कर्मा का पुत्र वृहद्रथ हुआ। उसका पुत्र वृहन्मना हुआ। वृहन्मना ने जयद्रथ को उत्पन्न किया। इससे राजा दृढ़रथ की उत्पत्ति हुई। उसका पुत्र जनमेजय हुआ जो विश्वविजयी था। उसके अंगों के द्वारा कर्ण पैदा हुआ जो उसका उत्तराधिकारी बना। उसका पुत्र सुरसेन हुआ और उसका पुत्र द्विज माध्वज कहा गया।

ऋषि बोले—हे सूतजी। जिस प्रकार राजा कर्ण को सूत पुत्र कहा जाता है वह प्रसंग भी हमें कहने की कृपा कीजिये। आप इन कथाओं के ज्ञाता है। अतः यह कथा भी हमें सुनाइये।

सूतजी बोले—राजा वृहद्भानु का पुत्र वृहन्मना हुआ था। उसकी दो पत्नियां थीं। जो दोनों ही चेदि देश के राजा की पुत्री थीं। उनके नाम थे यशोदेवि और सत्या। इन्हीं दोनों से राजा का वंश भी अलग-अलग बट गया। यशोदेवि से राजा जयद्रथ हुआ और सत्या से ब्राह्मण एवं क्षत्रियों के उद्धार करने वाले राजा विजय हुये। विजय के पुत्र धृति हुये। उसका पुत्र धृतव्रत हुआ। धृतव्रत का पुत्र सत्यकर्मा था। इसी सत्यकर्मा का पुत्र सूत अधिरथ हुआ। इसी ने कर्ण का पालन पोषण किया। इसीलिये कर्ण को लोग सूत पुत्र कहते हैं। कर्ण के बारे में मैं आपको पहलेकह चुका हूँ। इस प्रकार अंग के वंश में होने वाले राजाओं का विस्तार मैंने आपको कहा। अब इसके बाद पुरू वंश का वर्णन सुनिये।

सूतजी बोले—पुरू का पुत्र राजा जनमेजय हुए। उसका पुत्र अविद्ध हुआ, जिसने पूर्व दिशा को जीता था। अविद्ध का पुत्र प्रवीर हुआ। उसका पुत्र मनस्यु नामका हुआ। उसका पुत्र जयद हुआ। जयद का पुत्र धंधु था। धन्धु का पुत्र बहुगवी था। उसका पुत्र संजायी था। संजाति का पुत्र रौद्रश्व था। रौद्रश्व के घृताची अप्सरा से दस पुत्र हुए जिनके नाम हैं—रजेयु, कृतेयु, कक्षयु, स्थण्डिलयेयु, घृतेयु, जलेयु, स्थलेयु, धर्मेयु, संनतेयु, और वनेयु। इन पुत्रों के अतिरिक्त उसके दस पुत्रियां थीं। उनके नाम इस प्रकार हैं—रुद्रा, शुद्रा, मद्रा, शुभा जामलजा, तला, खला, गोपजला, ताम्ररसा, और रत्नकूटी। इन कन्याओं के स्वाम

अत्रिगोत्री प्रभाकर थे। राजा अनाद्दष्टका पुत्र रिवेयु था। रिवेयुकी पत्नि तक्षक की पुत्री थी। उससे रन्ति नामक पुत्र हुआ। रन्ति ने सरस्वती नामक पत्नि से त्रसु, अप्रतिरथ और ध्रुव नामक धार्मिक पुत्रों को उत्पन्न किया। उसकी एक मंगलमयी कन्या 'गौरी नाम की भी थी। जो राजा मान्धाता की माता हुई। राजा अप्रतिरथ का पुत्र धुर्य था। उसका पुत्र कण्ठ हुआ। उसका पुत्र मधातिथि था। मेधातिथि से कण्ठायन नाम का द्विजाति वर्ग का सृष्टि हुई। इसकी एक कन्या भी थी जिसके अनेक पुत्र हुये। राजा रन्ति के पुत्र त्रसु के पुत्र का नाम मलिन हुआ। उसने उग्रदानती से चार पुत्र उत्पन्न किये। जिनका नाम था दुष्यन्त, सुष्मन्त, प्रवीर, अनघ। इनमें दुष्यना का पुत्र राजाओं में श्रेष्ट भरत चक्रवर्ती सम्राट हुआ। यह राजा भरत दुष्यन्त की शकुन्तला नामक पुत्री से उत्पन्न हुआ। उससे ही भारत वर्ष की प्रसिद्धि है। राजा को इस सम्बन्ध में आकाशवाणी भी हुई थी। कि भरत तुम्हारा ही पुत्र है। शकुन्तला का अपमान मत करो शकुन्तला के गर्भ का तुम आधान करने वाले हो अतः इसकी रक्षा करो क्यों कि पिता का यही कर्त्तव्य है।

सम्राट भरत के तीन पत्नियां थी, उनमें नौ पुत्र पैदा हुये। भरत ने उन पुत्रों के विषय में यह कह कर तिरस्कार किया कि ये हमारी प्रतिष्ठा के योग्य नहीं हैं। इससे माताओं को बड़ा क्रोध आया और अपने इन सब पुत्रों को मारडाला। इस प्रकार राजा भरत के पुत्रों की उत्पत्ति व्यर्थ हो गई। मरुतों ने भरत को वृहस्पति के पुत्र भरद्वाज को को सौंपा जो भरत वंश में संक्रामित हुये। यह बात प्रसिद्ध है कि अशिज ऋषिकी पत्नि ममता जब गर्भवती हुई तब वे तपस्या में लीन रहने लगीं। एकान्त में अपने भाई की इस पत्नि को देखकर बृहस्पति बोले हे मंगले! मुझे मैथुन का दान दो। वृहस्पति के ऐसा कहने पर ममता बोली–मैं गर्भवती हूँ। गर्भ इस समय पूर्ण है। वह वेद का उच्चारण करता है। इधर तुम्हारा वीर्य भी व्यर्थ नहीं जाने का है। इस प्रकार व्यभचार से धर्म की क्षति होती है। इस पर बृहस्पति हँस

कर बोले हे सुन्दरि तुम मुझे किसी अपार की शिक्षा मत दो। मैं सब कुछ जानता हूं। ऐसा कहकर साहस पूर्वक उन्होंने ममता से मैथुन करने की चेष्टा की। रति कर्म में आनन्दित वृहस्पति से गर्भस्थ शिशु ने कहा– हे वृहस्पति जी ! इसगर्भ के प्रथम मौजूद हूँ आपका वीर्य भी व्यर्थ नहीं जा सकता। इस संमीर्ण गर्भस्थल में दो व्यक्तियों की सम्भावना नहीं की जा सकती। गर्भस्थ शिशु की बात सुनकर वृहस्पति जी बड़े भारी क्रोधित हुये। और बोले कि सभी प्राणियों को सुखमय इस अवसर पर तुम मुझे निषेध कर रहे हो। इसलिये तुम घोर अंधकार में पड़ोगे। इस प्रकार वृहस्पति के कहने पर गर्भस्थ शिशु ने माता के योनिद्वार को खोल दिया। परन्तु उस शिशु के पैरों के बीच में होकर वृहस्पति का वीर्य का ममता के उदर में पहुँच गया। वह तुरन्त ही एक शिशु का रूप धारण कर बाहर निकल आया। ममता ने उस सद्योजात पुत्र को देख कर कहा कि सुने ! मैं तो अपने स्थान को जा रही हूँ आप को इस द्वाज अर्थात् जारज पुत्र की पालना करनी पड़ेगी। ऐसा कह कर वह ममता उसी क्षण वहां से चली गई। " भरद्वाजम्' ऐसा कहने पर अर्थात् इस जारजपुत्र की रक्षा करो के वाक्य से उसका नाम भी भरद्वाज पड़ गया ! माता पिता के द्वारा छोड़े जाने पर इस पुत्र को मरुद्गणों द्वारा दया से उठा लिया गया। और उस समय सम्राट भरत जो पुत्र की कामना से यज्ञ कर रहे थे उन्हें सौंप दिया। इससे राजा भरत बहुत ही कृतार्थ हुये। भरत की पहली सन्तानों का जन्म वितथ (निष्फल) हो गया था। इसलिये भरद्वाज को वितथ नाम से भी कहा जाता है। भरत सम्राट के द्वारा लालन पालन किये जाने पर भरद्वाज ब्राह्मणत्व से ब्रह्मत्व को प्राप्त हुये। वे द्विमुख्यापन एवं द्विपितर नाम से भी विख्यात हैं। इस प्रकार अपने उत्तराधिकारी 'वितथ' को प्राप्त करके भरत राजा स्वर्ग को पधारे।

वितथ के पुत्र राजा भुवमन्यु हुये। भुवमन्यु के चार पराक्रमशाली पुत्र हुये। जिनके नाम थे, वृहत्क्षत्र, महावीर्य, नर और नाग्र (गार्ग)। इनमें नर के 'सांकृति' नामक पुत्र हुये इनके दो पुत्र गुरुवीर्य और त्रिदेव

नाम के महातेजस्वी थे जो सांकृत्य कहलाते थे। गाग्र के उत्तराधिकारी गाग्रय नाम से प्रसिद्ध हुये। ये सभी क्षत्रिय धर्म समन्वित ब्राह्मण कहे जाते हैं। महावीर्य के पुत्र भीम थे। उनसे उपक्षय नामक पुत्र हुआ इनकी पुत्री नाम विशाला था। उसने त्रय्यारुणि, पुष्करी और कपि नामक तीन बेटा उत्पन्न किये। कपि के वंशज उत्तम क्षत्री हुये। अन्य दोनों के महर्षि हुये।

गाग्रय और सांकृत्य के वंशधर केवल तेजस्वी क्षत्री हुये। वे सब अंगिरस बृहस्पति के वंश में मिलगये। अब बृहत्क्षत्र का वर्णन सुनाता हूं, सुनो– राजा बृहत्क्षत्र का पुत्र परमधार्मिक सुहोत्र का उत्तराधिकारी हस्ती था। उसने प्राचीन काल में हस्तिना पुत्र को बनाया। राजा हस्ती के तीन धार्मिक पुत्र हुये उनके नाम थे अजमीढ़ द्विजामीढ़ और और पुरुमीढ़। अजमीढ़ की कुरुवंश की उद्धारक तीन पत्नियां थीं। जिनके नाम थे नीलिनी, केशिनी, और धूमिनी उन सबने वंशोद्धारक कई पुत्रों को उत्पन्न किया अजमीढ़ को वृद्धावस्था में भरद्वाज की कृपा से ये पुत्र मिले थे ऐसा कहा जाता है कि केशिनी में राजा अजमीढ़ के एक 'कण्ठ' नामक बेटा उत्पन्न हुआ कण्ठ का बेटा मेधातिथि था। उसके वंशधर काण्ठ्यापन द्विज कहे जाते थे। दूसरी पत्नि धूमिनी में बृहत्वसु का जन्म हुआ। वृहत्वसु का बेटा वृहन्तिवरणु हुआ उसका बेटा महावल था। महावल का वृहत्कर्मा, का वृहद्रथ था। उसका बेटा विश्वजित था इनका बेटा सेनजितथा। सेनजितके चार लोक विख्यात बेटा थे। उनके नाम थे रुधिराश्व, काव्य दृढ़ धनुर्धारी राम और अपन्ति देश का राजा वत्स। इसी राजा के नाम से प्रसिद्ध वत्सरों का प्रारम्भ हुआ। रुचिराश्व का बेटा यशस्वी पृथुवेण हुआ। पृथुवेण का बेटा पार था। पार से नीप का जन्म हुआ। राजा नीप के सौ बेटा थे। जो नीपगण के नाम से प्रसिद्ध थे। उननीप गणों में ही समर नामक बेटा परम यशस्वी और वंश का उद्धार करने वाला था। उसने काम्पिल्य के युद्ध में विजय प्राप्त की। इस समर के पर वार और सत्वदश्व ये तीन बेटा थे। तीनों सर्वगुण सम्पन्न थे।

इनमें पार के वृषु नामक पुत्र हुआ। वृषु के सुकृति हुआ। उसके सर्वगुण वाला विभ्राज नामक पुत्र हुआ। विभ्राज का उत्तराधिकारी अणुह नामक राजा हुआ। यह यशस्वी अणुह शुक्र जमाई और ऋची का पति था। इसका उत्तराधिकारी ब्रह्मदत्त हुआ। इसका पुत्र योगसून् हुआ तथा योगसूनू का पुत्र विष्वसेन हुआ। ये सभी राजा बड़े ही यशस्वी हुये। राजा विष्कसेनका पुत्र उदक्सेन हुआ। जिसका उत्तराधिकारी भल्लार हुआ। भल्लार का उत्तराधिकारी जनमेजय हुआ। इसी के वैर के कारण उग्रायुध ने नीप वंशियों का नाश कर दिया था।

ऋषियों ने कहा— हे सूतजी! यह उग्रायुध किसका पुत्र था! यह किस वंश में उत्पन्न हुआ था! इसने किस कारण से नीप वंशियों का नाश कर दिया!

सूतजी बोले—हे ऋषियो! द्विभीढ़का उत्तराधिकारी राजा यवीनर हुआ। जिसका पुत्र धृतिमान हुआ। धृतिमान का सत्यधृति हुआ उसका पुत्र दृढ़नेमि हुआ। दृढ़नेमि का पुत्र सुवर्मा था। यह प्रतापी राजा था वह एकछत्र सम्राट था। वह सार्वभौम नाम से प्रसिद्ध था इस सार्वभौम नामक वंश से महत्पौरवनन्दन नामक राजा हुआ। इसका पुत्र 'रूक्मरथ' नामक था। रूक्मरथ का पुत्र सुपार्श्व था। इसका धार्मिक पुत्र सुमति था। सुमति का पुत्र धर्मात्मा सन्नतिमान हुआ। उसका पुत्र सनति हुआ। सनति का पुत्र कृत हुआ। यह राजा कृत कौथुमी-शाखा के महात्मा हिरण्यनाभि का शिष्य था। यह चौबीस सामसंहिता का वक्ता था। उसकी संहिताओं की प्रसिद्ध प्राच्य नाम से कही है। इसका पुत्र उग्रायुध हुआ। यह उग्रायुध परम वीर तथा पुरुवंशियों को आनन्द करने वाला था। इसने अपने पराक्रम को प्रसिद्ध करने के लिये पांचाल देश के राजा पृषत् के पितामह नील को मार डाला। इस राजा उग्रायुध का उत्तराधिकारी राजा क्षेम हुआ। क्षेम का पुत्र सुवीर हुआ। सुवीर का पुत्र नृपंजय हुआ। नृपंजय से वीररथ उत्पन्न हुआ ये पुरुवंशी राजा कहे गये।

अजमीढ़ की नलिनी नामकी पत्नि से नील का जन्म हुआ।

नील की बड़ी भारी तपस्या के द्वारा उसका पुत्र 'सुशान्ति' पैदा हुआ। उसका पुत्र पुरुजानु हुआ। पुरुजानु का पुत्र रिक्ष हुआ। रिक्ष के बहुत से उत्तराधिकारी हुये। उनके नाम इस प्रकार हैं—मुद्गल, क्षृजय, वृहदिषु, यवीयान और काम्पिल्य। इन पांचों पुत्रों के लिए पिता ने पांच उपजाऊ और सुन्दर जनपदों को बतलाया। ये पांच जनपद बाद में पांचाल नाम से प्रसिद्ध हुये। मुद्गल का सबसे बड़ा पुत्र ब्रह्मिष्ठ था जिसने इन्द्रसेन के संयोग से 'बध्यश्व' नामक पुत्र को पैदा किया। इसी राजा के संयोग से मेनका ने एक जुड़वां सन्तानोंको उत्पन्न किया ऐसा भी सुना जाता है। इनमें एक राजर्षि दिवोदास हुये और दूसरी यशस्विनी अहिल्या थीं। अहिल्या के शारद्वत ऋषि के संयोगसे ऋषि श्रेष्ठ शतानन्द हुये। शतानन्द के पुत्र सत्यधृति हुये। जो धनुर्वेद में पारंगत थे। एक बार एक अप्सरा को देखकर राजर्षि सत्यधृति का शुक्र सरकण्डों पर गिर गया। जिससे एक जुड़वां सन्तानें प्रकट हुईं। राजा शन्तनु वहां संयोग से मृगया को गये थे। उन्होंने उन बच्चों को दया से उठा लिया। इनका पोषण किया। इनका नाम कृपा और कृपी रखा गया। उसी कृपी का दूसरा नाम गौतमी था। शारद्वत के गौतम वंशियों का वर्णन किया गया। अब दिवोदास का की सन्तानों का वर्णन सुनिये—

दिवोदास का उत्तराधिकारी राजा मित्रयु था। उससे राजा मैत्रेय हुये। ये सभी क्षत्रिय धर्मपरायण और भार्गव गोत्रीय थे। इसी वंश में विद्वान राजा च्यवन का जन्म हुआ जिसके रथ की समानता करने वाला कोई नहीं था। च्यवन के सुदास सुदासके सहदेव सहदेव के सोमक हुए। वंश के विनाश होने के समय राजा अजमीढ़ ही सोमक के पुत्र हुये। सोमक का पुत्र जन्तु नाम वाला था। इसके अलावा उसके सौ पुत्र और हुये। जिनमें सबसे छोटा पृषत् था। यह पृषत् द्रुपद का पिता था। द्रुपद का पुत्र धृष्टद्युम्न धृष्टद्युम्न का पुत्र धृतकेतु हुआ। अजमीढ़ की तीसरी रानी के कोई सन्तान पहले तो थी नहीं, उसने कठोर तमस्या इस पुनर्जन्म में भी की सौ वर्षों तक कठोर तप, हवन और जागरण तथा पवित्र कार्य और स्वल्पाहार में निरत रही। कुशासन पर बैठकर ही सोना आदि

कार्य कर लेती थी। कठोर तप के कारण वह काली पड़ गई। उसमें राजा ने गर्भाधान किया। जिससे उसमें उसे 'ऋक्ष' नामक पुत्र की प्राप्ती हुई। यह ऋक्ष देखने में धुँये के समान काला था। इसका एक छोटा भाई 'सित' भी हुआ था। ऋक्ष से सम्बरण की पत्पत्ति हुई। सम्बरण से कुरु की उत्पत्ति हुई। इसकुरु ने नवीन तीर्थ कुरुक्षेत्र का निर्माण किया था। बहुत समय तक उसने कुरुक्षेत्र को जोता था। उस समय इन्द्र ने इसे वरदान दिया कि तुम्हारा यह क्षेत्र परमरमणी और पुण्यवान और धर्मात्माओं के निवास करने योग्य होगा। इसके वंशज कुरुगण कहलाये। ये सभी यशस्वी राजा थे। कुरु के पुत्र सुधन्वा, जह्नु, परीक्षित, पुत्रक और अरिमर्दन थे। इसमें सुधन्वा के उत्तराधिकारी बुद्धिमान सुहोत्र हुये। सुहोत्र का पुत्र धर्मात्मा च्यवन हुआ इसने अनेक यज्ञ करके इन्द्र के परम मित्र विद्योपचरि नामक पुत्र को पैदा किया। विद्योपचरि से गिरिका द्वारा सात पुत्र उत्पन्न हुये। उन में एक महारथी मगध सम्राट वृहद्रथ था। इसके अलावा प्रत्यग्रह, कुश, मीणवाहन, माथैल्य, ललित्थ, और मत्स्यकाल, नाम के छः पुत्र और भी थे वृहद्रथ के कुशाग्र नाम का पुत्र पैदा हुआ। राजा कुशाग्र के ऋषभ नाम का परम बलशाली पुत्र पैदा हुआ, ऋषभ के पुण्यवान नाम का परम धार्मिक पुत्र पैदा हुआ। उस पुण्यवान राजा सत्यहित नाम का बहुत वैभवशाली पुत्र पैदा हुआ। राजा सत्यहित के सुधन्वा नाम का पुत्र पैदा हुआ, राजा सुधन्वा के ऊर्ज नाम का परम प्रतापी पुत्र पैदा हुआ, ऊर्ज के नभस नाम का पुत्र पैदा हुआ। उस राजा नभभ के दो कटे हुये शरीर के टुकड़े पैदा हुये उन टुकड़ों को जरा नामकी राक्षसी ने एक में जोड़ दिया, तब उस राजा का नाम जरासन्ध पड़ा था। जरा से जोड़ जाने के कारण उसका नाम जरासन्ध पड़ा। वह राजा जरासन्ध अपने राज्य काल के समय सबसे अधिक बलवान था। फिर राजा जरासन्ध के सहदेव नाम का परम प्रतापी पुत्र पैदा हुआ। सहदेव के सोमाधि नाम का पुत्र हुआ, सोमाधिराजा के श्रुतश्रवा नामका पुत्र पैदा हुआ अब तक मैंने आपको मगधवंश के राजाओं का वर्णन सुनाया।

सूतजी बोले—हे ऋषिगणों ! परिक्षित राजा के जनमेजय नामक प्रतापी पुत्र उत्पन्न हुआ । उस राजा जनमेजय के पृथ्वीपति सुरथ नाम का पुत्र पैदा हुआ । सुरथ राजा के भीमसेन नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ राजा जह्नु के भी सुरथ नाम को एक पुत्र उत्पन्न हुआ । वह अपने राज्य काल में सबसे बढ़ा था । राजा सुरथ के बिदूरथ नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ, विदूरथ के सार्वभौम नामक पुत्र उत्पन्न हुआ । सार्वभौम राजा के जयत्सेन नामका पुत्र उत्पन्न हुआ, जयत्सेन के आराधि नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ, आराधि के महासत्व नामक पुत्र उत्पन्न हुआ, महासत्व के अयुतायु नामका पुत्र उत्पन्न हुआ । अयुतायु राजा के अक्रोधन नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ, अक्रोधन से देवातिथि नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ । इसके बाद देवातिथि राजा के ऋक्ष, ऋक्ष के भीमसेन, भीमसेन के दिलीप नामका बेटा पैदा हुआ, दिलीप राजा के प्रतिप नामका पुत्र पैदा हुआ, और प्रतिप के देवापि, शन्तनु, और वाह्लीक नाम के पुत्र हुये । वाह्लीक के सप्तवाह्लीश्वर नाम के बेटा पैदा हुये । वाह्लीक के बेटा सोमदत्त नाम से प्रसिद्ध हुये । सोमदत्त के भूरिश्रवा, शल नाम के बेटा पैदा हुये । धर्मात्मा देवापि तपस्या हेतु वन को चले गये । वन में वे मुनि वेष धारण करके देवताओं के उपाध्याय हुए महात्मा देवापि के च्यवन और इष्टक नाम के बेटा पैदा हुए । शन्तनु बहुत विद्वान और बहुत बड़े वैद्य थे, आगे चलकर वही राजा हुए । राजा शन्तनु के विषय में एक श्लोक की व्याख्या है—जिस २ मनुष्य को राजा शन्तनु स्पर्श कर देते हैं वह मनुष्य पुनः युवा होजाता है । वह इसी कारण शन्तनु नाम से प्रसिद्ध हुए । उस धर्मात्मा राजा शन्तनु का विवाह जान्हवी के साथ हुआ । ऐश्वर्य शाली राजा शन्तनु के जान्हवी नाम की स्त्री से देवव्रत नाम के बेटा पैदा हुए । वही देवव्रत राजा भीष्म के नाम से प्रसिद्ध हुए वे सभी पाण्डवों के पितामह थे । राजा शन्तनु ने अपनी दूसरी पत्नि दासेयी से विचित्रवीर्य नामके पुत्रको पैदा किया, वह परम हितैषी राजा शन्तनु को प्रिय थे । राजा विचित्रवीर्य की स्त्री के साथ कृष्णद्वैपायन ने सम्भोग करके धृतराष्ट्र, पाण्डु और विदुर को पैदा किया ।

इनमें धृतराष्ट्र ने गान्धारी के संयोग से सौपुत्रों को पैदा किया, इन सौ पुत्रों में सबसे बड़े पुत्र का नाम दुर्योधन था, वह अपने समय का बहुत क्षत्रिय प्रतापी राजा था पाण्डु ने प्रथा और माद्री नाम की दो स्त्रियों से देवताओंके दिये हुये पुत्रों को पैदा किया। राजा धर्म से युधिष्ठिर हुये, वायुसे वृकोदर का जन्म हुआ, इन्द्रके अंशसे अर्जुनका जन्महुआ दोनों अश्विनी कुमारों के संयोग से नकुल और सहदेव को माद्री ने पैदा किया। इन पांचों पाण्डु के पुत्रों के संयोग से द्रोपदी ने भी पांच पुत्रों को पैदा किया। द्रोपदी ने युधिष्ठिर के संयोग से सबसे बड़े पुत्र प्रतिविन्ध्य को पैदा किया। भीमसेन ने हिड़म्बा के संयोग से घटोत्कच नाम के पुत्र को पैदा किया। भीमसेन ने अपनी दूसरी स्त्र काश्या के गर्भ से सर्वबृक नाम के पुत्र का पैदा किया था। मद्रदेश के राजा की कन्या विजया ने सुहोत्र नाम के पुत्र को पैदा किया। चेदि देश की राजपुत्री कर्मरवी ने नकुल के संयोग से नरमित्र नाम के पुत्र को जन्म दिया पार्थ के संयोग से सुभद्रा ने अभिमन्यु को पैदा किया, विराट राजा की कन्या उत्तरा ने अभिमन्यु के संयोग से राजा परीक्षित को जन्मके दया। जनमेजय नाम का पुत्र पैदा हुआ।

राजा जनमेजय ने वाजसनेय यज्ञ की स्थापना करने वाले बहुत से ब्राह्मणोंकी मर्यादा कायम की, वैशम्पायन पर यह कार्य सहन नहींहुआ, और क्रोध में भर कर बोले हे दुर्बुद्धे राजा! तुम्हारी यह मर्यादा पृथ्वी पर स्थिर न रहेगी, जब तक मैं जीवित हूं यह कार्य नहीं हो सकता। चारों तरफ से दुखी होकर राजा जनमेजय ने पौर्णमास नाम के यज्ञ का अनुष्ठान किया और उसमें ब्रह्माजी को हविदेकर प्रसन्न किया। मख में प्रजापति के निमित्तयज्ञ करने पर भी उनकी वैसी ही स्थिति रही। इस प्रकार देख कर राजा जनमेजय ने फिर दो अश्वमेध यज्ञों का अनुष्ठान किया, और उसमें अपने व्दारा प्रतिष्ठित वाजसनेय का प्रवर्तन किया, इसमें वे तीन स्थानों पर परास्त हुये। इससे उन्हें बड़ा दुख हुआ और अन्न में ब्राह्मणों के साथ वह मृत्यु को प्राप्त हुआ। राजा जनमेजय के शतानीक नाम के पुत्र पैदा हुये।

ब्राह्मणों ने राजा जनमेजय की मृत्यु के बाद शतानीक को राज्य-पद पर नियुक्त किया। राजा शतानीक के अश्वमेधदत्त नाम का पुत्र पैदा हुआ। अश्वमेधदत्त के शत्रुओं को जीतने वाले राजा अधिसाम कृष्ण पदा हुए। हे ऋषियो! यही परमधर्मात्मा राजा समप्रति राज्य कर रहा है।

ऋषि बोले—हे सूतजी! आपने हमको भूतकालीन राजाओं के विषय में तो बतला दिया, अब आप हमको भविष्य में होने वाले राजाओं के विषय में बतलाइये। भविष्य में उत्पन्न होकर वे किस नवीन विधानों का प्रवर्तन करेंगे। उनके नाम तथा उनके शासनकाल के विषय में हमको बतलाइये। हम उस समय की प्रजाओं के सुख, दुख, दोष, युग प्रमाण, उनके धर्म अर्थ काम सम्बन्धी विचारों को सुनने के इच्छुक हैं। ऋषियों के इस प्रकार कहने पर श्रेष्ठ सूतजी ने जैसा कुछ सुना था वैसा ही बतलाया।

सूतजी बोले—हे ऋषियो! इस कर्म शील व्यासजी ने इसके विषय में जो कुछ मुझे बतलाया है, उसे मैं आपको बतलारहा हूँ। आगे भविष्य में जिस प्रकार कलियुग आयेगा, जितने मन्वन्तर होंगे, तथा जितने राजा पैदा होंगे, मैं उन सबके विषय में बतलारहा हूँ। राजा अधिसामकृष्ण के पुत्र निवक्त्र होंगे। गंगा द्वारा हस्तिनापुर के डूब जाने पर वह उसे छोड़ कर कौशम्बी नाम के नगर को बसायेगा और वहीं पर निवास करेगा। राजा निर्वक्त्र के उष्ण नाम का पुत्र पैदा होगा। उष्ण के चित्ररथ नाम का पुत्र पैदा होगा. चित्ररथ राजा के शुचिद्रथ नाम का पुत्र पैदा होगा। शुचिद्रथ से सुषेण नाम के महा-बलशाली पुत्र पैदा होंगे। सुषेण के सुतीर्थ नाम के पुत्र पैदा होंगे, सुतीर्थ के रुच नाम का पुत्र प्राप्त होगा, रुच के त्रिचक्ष नाम का पुत्र पैदा होगा, त्रिचक्ष के सुखीबल नाम का पुत्र पैदा होगा, सुखीबल के परिप्लुत नाम का राजा होगा, परिप्लुत के सुनय नामका राजा पैदा होगा। सुनय के मेधावी नामक पुत्र प्राप्त होगा, मेधावी के दण्डपाणि नाम के पुत्र पैदा होंगे। दण्डपाणि के निरामित्र नामका पुत्र प्राप्त

होगा, निरामित्र राजा के क्षेमक नाम का पुत्र पैदा होगा, क्षेमक के इत्यादि पच्चीस राजा इस पौरववंश में पैदा होंगे। प्राचीन कथाओं के जानने वाले विद्वान इस वंश के विषय में एक श्लोक लिखते हैं जिसकी व्याख्या इस प्रकार है–जिस वंश में ब्रह्मण और क्षत्रिय वंश के मनुष्य पैदा होते हैं तथा जिस वंश के देवता और ऋषि आदर करते थे, वह पौरववंश कलियुग में क्षेमक राजा के बाद समाप्त होजायगा। मैंने आप लोगों को पौरववंश का वर्णन सुनाया है। अबमैं इक्ष्वाकु वंशके राजाओं का वर्णन करूँगा। इस वंश के राजा वृहद्रथ के बृहत्क्षय नाम का पुत्र पैदा होगा, बृहत्क्षय के क्षय नामका पुत्र उत्पन्न होगा, क्षय के वत्सव्यूह नाम का पुत्र होगा, वत्सव्यूह के प्रतिव्यूह नामका पुत्र उत्पन्न होगा, प्रतिव्यूह के दिवाकर नामका पुत्र होगा, यह राजा दिवाकर अयोध्यानगरी का राजा होगा। विवाकर के सहदेव नाम का राजा होगा, सहदेव के बृहदश्व नाम का पुत्र होगा, वृहदश्व के भानुरथ नाम का पुत्र होगा, भानुरथ के प्रतीताश्व नाम का पुत्र होगा, प्रतीताश्व के सुप्रतीत नामका पुत्र होगा, सुप्रतीत के सहदेव नामक पुत्र होगा, सहदेव के सुनक्षत्र नामक पुत्र होगा, सुनक्षत्र के परम तपस्वी किन्नर नाम का पुत्र पैदा होगा, किन्नर के अन्तरिक्ष नामक परम प्रतापीराजा होगा, वह अपने समय का महान राजा होगा। अन्तरिक्ष के सुपर्ण नाम का पुत्र होगा, सुपर्ण के अमित्रजित नाम का पुत्र होगा। अमित्रजित् के भरद्वाज के धर्मी नामका बेटा होगा, धर्मी के कृतञ्जय नामका बेटा होगा। कृतञ्जय के व्रात नामका बेटा होगा, व्रात के रणञ्जय नामक बेटा होगा, रणञ्जय के सञ्जय नामका परम वीर राजा होगा। सञ्जय के शाक्य और शाक्य के शुद्धोदन नामका बेटा होगा, शाक्यवंश में शुद्धोदन के राहुल नामका बेटा होगा, राहुल के प्रसेनजित नामका राजा होगा, प्रसेनजित के क्षुद्र नामका राजा होगा, क्षुद्रक के क्षुलिक नामका राजा होगा, और क्षुलिक के सुरथ नामका बेटा होगा सुरथ के सुमित्र नामका बेटा होगा, वही इस वंश का अन्तिम राजा होगा। कलियुग में इक्ष्वाकुवंश के ये इतने ही राजा होंगे। वृहद्बल के वंश में कलियुग में इतने ही

राजा होंगे ये सभी शूरवीर, धर्मात्मा और जितेन्द्रिय होंगे। इस इक्ष्वाकु वंश के विषय में विद्वानों ने एक श्लोक लिखा है–इक्ष्वाकुवंश के राजाओं की परम्परा राजा सुमित्र तक ही चलेगी, कलियुग में सुमित्र राजा के बाद यह वंश समाप्त होजायगा। मैंने आपको मनु बेटा राजा इलाके वंश में उत्पन्न होने वाले राजाओं का वर्णन सुना दिया है अब मैं मगधदेश के वृहद्रथ राजा के वंश में उत्पन्न होने वाले राजाओं के विषय में बताऊँगा। उस विख्यात महाभारत में राजा सहदेव मृत्यु को प्राप्त हुए, उनके बाद उनका लड़का सोमाधि गिरिब्रज का राजा था, उसने अट्ठावन वर्ष तक राज्य किया। उसके बेटा श्रुतिश्रवा ने चौंसठ वर्ष तक राज्य किया, इसके बेटा अयुतायु ने छब्बीस वर्ष तक राज्य किया, इस के बाद अयुतायु के बेटा निरामित्र ने सौ वर्ष तक राज्य किया। इस समय उस वंश में सेनाजित राजा राज्य कर रहा है। सुकृत ने छप्पन वर्ष तक राज्य किया, वृहत्कर्मा ने तेइस वर्ष तक पृथ्वी पर राज्य किया। सेनाजित के बेटा श्रुतञ्जय ने चालीस वर्ष तक राज्य किया महाबल नामके महान प्रतापी राजा ने अट्ठावन वर्ष तक राज्य किया। शुचि नाम के राजा ने पैंतीस वर्ष तक राज्य किया, क्षेम नाम के राजा ने अट्ठावन वर्ष तक राज्य किया, भुवत नाम के महान बलशाली राजा ने चौंसठ वर्ष तक राज्य किया। धर्म क्षेत्र राजा ने पाँच वर्ष तक राज्य किया। इसके बाद नृपति राजा अट्ठावन वर्ष तक राज्य करेगा, राजा सुव्रत अड़तीस वर्ष तक राज्य करेगा। इसके बेटा राजा दृढ़सेन ने अट्ठावन वर्ष तक राज्य किया इसके बाद राजा सुमति ने तेंतीस वर्ष तक राज्य किया, सिचुल नाम के राजा ने बाइस वर्ष तक राज्य किया, इसके बाद राजा सुनेत्र ने चालीस वर्ष तक राज्य किया, सत्यजित् राजा ने तिरासी वर्ष तक राज्य किया। इसके बाद वीरजित राजा ने तेंतीस वर्ष तक राज्य किया। इनके बाद अरिंजय नाम के राजा ने पचास वर्षों तक राज्य किया वृहद्रथ के बाद ये बाईस राजा पृथ्वी पर राज्य करेंगे। इन सबका शासनकाल एक हजार वर्ष तक रहेगा। बृहद्रथ वंश के राजाओं के राज्यकाल के बाद वितिहोत्र वंश के राजाओं का राज्य

इस के विसाखयूप नाम का राजा पचास वर्ष तक राज्य करेगा, अजक नाम का राजा इकतीस वर्ष तक राज्य करेगा, इसका पुत्र वीर्तवर्धन बीस वर्ष तक राज्य करेगा, प्रद्योत के ऊपरी पाच वंश के राजा इस तरह एक सौ अड़तीस वर्षों तक राज्य करेंगे। इसके बाद उन सब को नष्ट करके शिशुनाक राजा गिरिव्रज का राजा होगा, इसका पुत्र वाराणसी में राज्य करेगा, शिशुनाक राजा चालीस वर्षों तक राज्य करेगा। उसका पुत्र शकवर्ण छत्तीस वर्ष तक राज्य करेगा, उसके बाद क्षेमवर्मा बीसवर्ष तक राज्य करेगा, फिर अजातशत्रु पच्चीस वर्षों तक राज्य करेगा। इसके बाद क्षत्रोजा राजा चालीस वर्ष तक राज्य करेगा राजा विविसार अट्ठाईस वर्ष तक राज्य करेगा। दर्शक नामका राजा पच्चीस वर्ष तक राज्य करेगा। इसके बाद उदायी नामका राजा तेतीस वर्ष तक राज्य करेगा, राजा उदायी पृथ्वी पर कुसुम नाम से प्रसिद्ध होगा। इसके बाद निदिवर्धन नाम का राजा बयालीस वर्ष तक राज्य करेगा, फिर महानन्दी राजा तैंतालीस वर्ष तक राज्य करेगा, ये ऊपरी दस राजा शिशुनाक के वंश में उत्पन्न होंगे। ये सब तीन सौ बासठ वर्ष तक राज्य करेंगे। इन शिशुनाक के वंशमें राजाओं के राज्यकाल में अन्यय क्षत्रिय जाति के राजा भी होंगे। जिनमें रक्षाकुवंश के चौबीस, पंचालवंश के पच्चीस, कालकवंश के चौबीस, हैहय वंश के चौबीस, कौलंगदेशीय बत्तीस, शकवंश के पच्चीस, कुरुदेशीय छत्तीस, मिथिला देश के अठ्ठाईस शूरसेन के तेंइस, वीतिहोत्र के, बीस बताये जाते हैं। इन सब का शासन काल एक ही समयमें होगा। सभी क्षत्रियवंश के राजाओं के बाद महापद्म से शूद्रयोनि में उत्पन्न कन्था से महापद्म नामका एक पुत्र पैदा होगा। उसी के राज्य काल में सभी लोग शूद्रयोनि में उत्पन्न होंगे, वह महापद्म अपने समय का एकच्छत्र राजा होगा, वह राजा अठ्ठाईस वर्ष तक राज्य। करेगा वह महापदम समस्त क्षत्रिय राजाओं के गर्व को दूर करेगा, उसके एक हजार पुत्र पैदा होंगे, इन एक हजार पुत्रों में बारह पुत्र राजा होंगे, वे सब आठवों तक राज्य करेंगे। महापद्म के बाद वे क्रम से सब राज्य करेंगे।

उन सब राजाओं को कौटिल्य नष्ट कर देंगे। इस वंश का अन्तिम राजा सौ वर्षों तक राज्य करेगा। कौटिल्य उसको हटा कर चन्द्रगुप्त को सिंहासन पर बैठायेंगे। चन्द्रगुप्त चौबीस वर्षों तक राज्य करेंगे। उसके बाद भद्रसार पच्चीस वर्ष तक राज्य करेगा। फिर इसके बाद अशोक नाम का राजा छत्तीस वर्षों तक राज्य करेंगे। उसका पुत्र कुशाल आठ वर्ष तक राज्य करेगा। कुशाल का पुत्र वन्धुपालित आठ वर्ष तक राज्य करेगा। बन्धुपालित के पुत्र दस वर्ष तक राज्य करेगा, देववर्मा सात वर्ष तक राज्य करेगा, उसका पुत्र शतधर आठ वर्ष तक राज्य करेगा, बृहदश्व राजा सात वर्ष तक राज्य करेगा, ये नंद वंश के नौ राजा पृथ्वी पर राज्य करेंगे। सब एक सौ सैंतीस वर्ष तक राज्य करेंगे इन नन्दवंश के शुंग वंश राज्य करेगा, नन्द वंश का अन्तिम राजा बृहदश्व का सेनापति पुष्पमित्र उसको मार कर स्वयं आठ वर्षों तक राज्य करेगा। पुष्पमित्र के आठ पुत्र होंगे वे सब राजा होंगे, इनमें इन सबसे बड़ा पुत्र सात वर्ष तक राज्य करेगा। फिर वसुमित्र नाम का पुत्र दस वर्ष तक राज्य करेगा, फिर अन्ध्रक नाम के पुत्र दो वर्ष के लिये राज्य करेंगे। पुलिन्दक राजा तीन वर्ष तक राज्य करेगा, घोष-सुत नाम का राजा तीन वर्ष तक राज्य करेगा। राजा विक्रमित्र तीन वर्ष तक राज्य करेंगे। भगवत नाम के राजा बत्तीसवर्ष तक राज्य करेंगे इसके बाद उनके क्षेमभूमि नाम के पुत्र दस वर्ष तक राज्य करेंगे। ये शुंग वंश के दस राजा पृथ्वी पर एक सौ बारह वर्ष तक राज्य करेंगे। इसके बाद फिर बचपन से ही व्यसन में निरत रहने वाले राजा सुदेव राज्य करेंगे। इस वंश में देवभूमि नाम का एक राजा और भी होगा, वह कण्ठायन नाम से नौ वर्षों तक राज्य करेगा, इसके बाद उनके पुत्र भूतिमित्र चौबीस वर्षों तक राज्य करेंगे। इनके बाद राजा नारायण बारह वर्ष तक राज्य करेंगे। फिर इनके बाद इनका पुत्र सुशर्मा दस वर्ष तक राज्य करेगा। हे ब्राह्मणो! इस प्रकार कठोर कर्म करने वाले ये ऊपरी राजा कण्डायन नाम से प्रसिद्ध हुये। इनका शासन काल पैंतालीस वर्षों का होगा। अब मैं इनके बाद आंन्ध्रवंश के राजाओं का

करूँगा वर्णन अन्ध्रजातिमें सिन्धुक नामका एक राजाऔर राज्य करेगा। यहराजा सिन्धुकतेईस वर्षोंतक राज्यकरेगा। इसके बादभात नामका राजा अठारह वर्षों तक राज्य करेगा, उसके बाद उसका पुत्र शातकर्णि नाम का राजा अपादवद्ध होगा, वह, दस, चौबीस और छः वर्षों तक राज्य करेगा। इसके नेमिकृष्ण राजा पच्चीस वर्ष तक राज्य करेगा, इसके बाद हाल नाम का राजा सिर्फ एक साल राज्य करेगा, इस वंश में पांच,सात राजा महाबलवान होंगे। हाल के बाद पुत्रिकषेण नाम का राजा इक्कीस वर्ष तक राज्य करेगा। इसके बाद सातकर्णि नाम का राजा एक वर्ष छः महीने तक राज्य करेगा। इसके बाद शिवस्वामी नाम का एक राजा अट्ठाईस वर्ष तक राज्य करेगा। इसके बाद गौतमी पुत्र इक्कीस वर्ष तक राज्य करेगा, साकपर्णिराजा के वंश में यज्ञश्री नामका राजा उत्पन्न होकर उन्नीस वर्ष तक राज्य करेगा। इसके बाद विजय नाम का राजा छः वर्ष तक राज्य करेगा, इसके बाद सातकर्णिदण्डश्री तीन वर्ष तक राज्य करेगा। फिर पुलोवा नाम का राजा सात वर्ष तक राज्य करेगा। इन राजाओं के अलावा और भी राजा पृथ्वी पर राज्य करेंगे। अन्ध्रवंश के तेईस राजा पृथ्वी पर राज्य करेंगे। ये सब मिला कर चार सौ ग्यारह वर्ष तक राज्य करेंगे। ये अन्ध्रवंश के राजा पांच भागों में बँट जायेंगे। इसके बाद सत्रह आभीर वंश के राजा राज्य करेंगे। फिर सात गर्दभिन वंश के और दस शंख वंश के राजा राज्य करेंगे। इनके बाद आठ यवन, चौदह तुषार वंश के तेरह मनष्ट वंश के और अट्ठारह मौन वंश में उत्पन्न होने वाले राजा राज्य करेंगे। आन्ध्रवंश के राजा तीन सौ वर्ष तक राज्य करेंगे। शंकवंश के राजा तीन सौ अस्सी वर्ष तक राज्य करेंगे। यवन वंश के राजा अस्सी वर्ष तक राज्य करेंगे। तुषार वंश के राजा पांच सौ वर्षों तक राज्य करेंगेम। मरुण्डवंश के तेरह राजा अन्य शूद्रजाति राजाओं के साथ चार सौ पचास वर्ष तक राज्य करेंगे। अनेक म्लेच्छ जातियां भी उस समय होंगी। उनमें से ग्यारह म्लेच्छ वंश के राजा तीन सौ वर्षों तक राज्य करेंगे। इन राजाओं के बाद कोलिकिलों नाम की शूद्र

जाति के राजा राज्य करेंगे। इन राजाओं में विन्ध्य शक्ति नाम का राजा छियानवें वर्ष तक राज्ज करेगा। इनके बाद शूद्रजातिके राजाओं का हाल सुनिये। शेषनाग का पुत्र राजा भोगी नामकुल में सर्वश्रेष्ठ राजा होगा, यही सबसे पहला विदेशी राजा राज्य करेगा। इसके बाद सदाचन्द्र नाम के राजा चन्द्रवंशभूत नखवान् धनधर्मा विंशज् और भूतिनन्द नाम के राजा विदेश में राज्य करेंगे। अंग वंश के राजा नन्द के बाद मधुनन्दि ने राज्य किया, मधुनन्दि के छोटे भाई नन्दियशा ने राज्य किया उसके वंश में तीन राजाओं ने राज्य किया, दौहित्र, शिशुक, और परम बलशाली प्रवीर ने राज्य किया था। इन में प्रवीर राजा विन्ध्यशक्ति का पुत्र होगा, राजा शिशुक पुरी में अन्य दोनों राजा काञ्चनपुरी में राज्य करेंगे। ये तीनों राजा प्रचुर दक्षिणा देकर वाजपेय यज्ञ का अनुष्ठान करेंगे। इसके बाद प्रवीर के चार पुत्र राज्य करेंगे। विन्ध्यक वश के राजाओं के नष्ट हो जाने पर सुप्रतीक नभीर, इत्यादि तीन बाह्लीक राजा तीस वर्ष तक राज्य करेंगे। महिषीवंश में शक्यमा नाम का राजा राज्य करेगा। इसके बाद पुष्पमित्र और मित्र नाम के राजा तेरह वर्ष तक राज्य करेंगे। मेकला में सात प्रसिद्ध राजा राज्य करेंगे। कुध बलशाली राजा कोमला में राज्य करेंगे। इसके बाद मेघ नाम के परम बुद्धिमान राजा मन्वन्तर के क्षय होने तक राज्य करेंगे। ये नल वंश में उत्पन्न होंगे। इसके बाद मगधदेश का विश्वस्फानि नाम का राजा राज्य करेगा। उस समय के राजाओं को नष्ट करके अन्याय जाति वालों को राज्य प्रदान करेगा। इनमें कवर्त पञ्चक, पुलिन्द और ब्राह्मणों के नाम से प्रसिद्ध हैं। महान बलशाली विश्वस्फानि विभिन्न देशों में इन जाति वालों का राज्य स्थापति करेगा। राजा विश्वस्फानि नपुसंक की समान आकृति वाला होगा। विश्वस्फानि राजा अपने जीवन में एक बार देवता ब्राह्मणो पितरों को सन्तुष्ट करके गंगा के किनारे प्राण त्याग देगा। वह मरने के बाद इन्द्र लोक को प्राप्त होगा। उसके बाद चम्पापुरी में नव नाग वंश के राजा राज्य करेंगे। मथुरापुरी में सात नाग वंश के राजा

निषध, यदुक, शैशीत, कोलतोपद, इत्यादि स्थानों में मणिधान्यवंश के राजा राज्य करेंगे। कनक नाम का राजा सौराष्ट्र भद्रयक स्थानों का राजा होगा। ये सब राजा भी उसी एक समय में इन सब स्थानों में राज्य करेंगे। इनके बाद झूठ बोलने वाले, क्रोधी, अधर्म कर्म करने वाले यवनों का राज्य होगा। वे राजा यवन युगदोष के कारण परम दुराचारी होंगे। कलि के अन्त में स्त्री और बच्चों का वध करने वाले ये राजागण आपस में मारकाट करके पृथ्वी पर राज्य करेंगे। ये दुराचारी राजा कहीं पर तो अधिक संख्या में होंगे, और कहीं पर बहुत बढ़कर मृत्यु को प्राप्त होंगे। पृथ्वी पर कालक्रम से ऐसे दुराचारी राजाओं का राज्य होगा। वे धर्म अर्थ और काम से सर्वदा विहीन रहेंगे। ऐसे राजा उलट फेर करके मृत्यु को प्राप्त होंगे। कालक्रम से नाश होजाने पर उनके स्त्रियों की संख्या अधिक बढ़ जायगी। मनुष्य आयु, सौन्दय बल और शास्त्रज्ञान में धीरे धीरे न्यून होते जायेंगे। इस तरह नष्ट होते होते प्रजा जब अन्तिम नष्ट की सीमा पर आजायगी, तो वे दुराचारी राजा काल कर्म से मृत्यु को प्राप्त होंगे।

इस प्रकार जब कलियुग सन्ध्यामात्र शेष रह जायगा, तो राजा शब्द ही नष्ट होजायगा। धर्म के नष्ट होजाने पर साधनहीन आपत्ति की मारी, शोक और व्याध के कारण चिन्ता से पूर्ण अनावृष्टि तथा आपसी लड़ाई झगड़े सर्व दुखी प्रजा असहाय होजायगी। वे सब तरफ से दुखी होकर जीविका विहीन होजायगी। वे नगर और पुर ग्रामों को छोड़ कर वन में रहने लगेंगी। इस तरह राजाओं के नष्ट होजाने के बाद प्रजा अपने घर ग्राम छोड़कर भाग जायगी। आपसी प्रेमभाव दूर होजायगा। वे संकटवर्ण होजायगी, वर्णाश्रम धर्म का भी लोप हो जायगा। वे पर्वतों की गुफा और गंगा के एकान्त किनारे पर निवास करेंगीं। सभी प्रजा घर छोड़कर सर्दियों के तट तथा पर्वत की गुफाओं एवं जल वाले प्रान्तों में भाग जायेंगी। मानव जाति अपने प्रिय देशों को छोड़कर अङ्ग, कलिंग, वंग काशमीर, काशी, कोशल ऋषिक गिरि द्रोणी आदि प्रान्तो में आश्रय बनायेंगे। आर्य लोग मलेच्छों के साथ

हिमालय की भूमि, क्षार समुद्र के तटवर्ती भागों, भीषण जंगलों में मृगों, मछलियों, पक्षियों और हिंसक जन्तुओं के साथ साथ मधु, शाप, मूल फल आदि खा खाकर जीवन यापन करेंगे। वे मुनियों की तरह वल्कलों मृगचर्मों एवं पत्तों के चीर अपने हाथों से बना बनाकर धारण करेंगे। निम्न प्रान्तों में अन्न ढूंढ़ते ढूंढ़ते काष्ट और शंकुओं को खाकर जीवन बितायेंगे। बकरी भेड़ गधे ऊँट पालेंगे। जल के लिये नदियों के किनारे रहेंगे। राजाओं में विषमता के बीज बोयेंगे। किन्हीं किन्हीं को सन्तानें अधिक और किन्हीं को एकदम कम होंगी। पवित्रता और आचार एकदम नष्ट हो जायगे। लोग अधर्म मय कार्यों को अधिक करेंगे। तेईस वर्ष से अधिक किसी की भी आयु न होगी। दुर्बलता, विषयलोलुपता, वृद्धता से दबे लोग जीविका के लिये घूम रहे थे। कलियुग के अन्त में लोग अनेक आपत्तियों में घिरे रहेंगे। एक हजार वर्ष वाले उस कलियुग के बीतने पर सारी प्रजा अधिकांश में नष्ट हो जायगी। इस प्रकार संध्या सहित कलियुग के बीतने पर कृतयुग प्रारम्भ होने लगेगा।

जिस समय चन्द्रमा, सूर्य, पुष्य और गुरु एक ही राशी पर आ जायेंगे तब कृतयुग का प्रारम्भ होगा। राजा परीक्षित के जन्म से लेकर महापद्म के अभिषेक तक का समय एक हजार वर्ष का मानना चाहिये। पुराणों के जानकार वेदज्ञ ऋषियों ने महापद्म के शासनकाल से आंध्रों के अन्त तक का काल आठसौ उन्तीस वर्ष का बतलाया है। सप्तर्षि एक नक्षत्र में सौ वर्षों तक रहते हैं। इस प्रकार वे २७ नक्षत्रों में सत्ताईस सौ वर्ष तक रहते हैं। दिव्य साठ वर्षों तथा सात दिनों का सप्तर्षियों का एक सौ वर्ष माना गया है। हमारे मत से सप्तर्षिगण राजा परीक्षित के राजत्वकाल में मघा नक्षत्र में स्थित होंगे तथा आन्ध्र वंशीय राजा की समाप्ति पर वे चौबीसवें नक्षत्र यानी शतभिषा में स्थित होंगे। उस समय प्रजा भारी आपत्ति में फँसी होगी। भूख से दुखी लोग जीविका के लिये घूमेंगे। ब्राह्मण लोग शूद्रों की उपासना करेंगे। जिस दिन से भगवान कृष्ण स्वर्गवासी

होंगे उसी दिन से कलियुग का प्रारम्भ मानना चाहिये कलियुग की अवधि सुनिये। मानव मान से कलियुग तीन लाख साठ हजार वर्षों का कहा है। उसका संध्याश देवमान से एक हजार वर्ष का कहा है।

हमने सूर्य के कीर्तिशाली वंशों का वर्णन किया। प्रत्येक युग में सहस्रों पराक्रमशाली राजा होगये हैं। उनकी संख्या परिमाण प्रत्येक के कुल के अनुसार मैंने कही है। इस वैवस्वत मन्वन्तर में निमि वंश की समाप्ति हो जाती है। इस युग में जिस प्रकार इन क्षत्रियों की उत्पत्ति होगी उसका वर्णन किया जाता है। सो सुनो—

पौरव वंश में देवादि नाम का राजा महान योगाभ्यासी होगा जो कलाप नामक ग्राम में निवास करेगा। इसी प्रकार इक्ष्वाकु वंश के सोम पुत्र सवर्चा नाम के राजा होंगे। चौबीसवें युग में दो परमवीर राजा धर्म का प्रवर्तन करने वाले होंगे। बीसवें युग में आदिम राजा चन्द्र वंश का कोई नहीं होगा। राजा देवापि बिना किसी बैर भावना के ऐल वंश का प्रथम राजा होगा। चारों युगों के लिये दो राजा क्षत्रिय धर्म के प्रवर्तक होंगे। इसी प्रकार त्रेता युग के प्रारम्भ में ये पुनः जन्म धारण करेंगे द्वापरांश में न तो क्षत्री रहेंगे और न ऋषिगण रहेंगे। सतयुग और त्रेता युग के क्षीण होने पर वे ऋषि तथा राजर्षि क्षत्रिय राजाओं के साथ स्थित रहेंगे। क्षत्रिय वंश का मूलतः विध्वंस ब्राह्मणों के साथ सम्बन्ध स्थापन सातों मन्वन्तरों में उत्पन्न होने वाली प्रजायें, युगों की परम्परा, ब्राह्मण एवं क्षत्रियों की उत्पत्ति, उनके कुलों का विस्तार फिर विनाश तथा दीर्घायु प्रगति, प्रजाओं की प्रवृत्ति आदि जो होती है उसे सप्तर्षिगण जानते हैं। इस क्रम के अनुसार ऐल तथा इक्ष्वांकु वंशीय द्विजातियां त्रेता में उत्पन्न होकर कलियुग के विनाश तक के युग का अनुवर्तन तब तक करती हैं जब तक मन्वन्तर का अन्त नहीं होता।

परशुराम के द्वारा क्षत्रियों के संहार करने के बाद चन्द्र एवं सूर्य वंश पुनः उत्पन्न हुये। उनका वर्णन इस प्रकार है—ऐल एवं इक्ष्वांकु वंश ऐसे थे जिनमें प्रसिद्ध सौ राजा हुये। भोज वंशीय राजाओं

के कुलों की संख्या द्विगुणी कही जाती है। इनमें ऐसे क्षत्रिय राजा हुये जिनकी संख्या तीनसौ के लगभग है। प्रतिबन्धियों की संख्या एक सौ, नागों की संख्या एक सौ, हयों की संख्या एक सौ. धृतराष्ट्रों की संख्या एक सौ, जनमेजय की संख्या अस्सी, ब्रह्म दत्तों की एक सौ, शीरी व कीरी की सख्या एक सौ, पैलों की संख्या एक सौ, श्वेतकुश, काशों की संख्या एक सौ की है। शत विन्दु नामक एक सौ राजा हो चुके हैं। ये सभी राजा करोड़ों की संख्या में दक्षिणा दान करने वाले अनेक अश्वमेध यज्ञों को कर चुके हैं। वैवस्वमनु की सन्तान बहुत बड़ी संख्या में हुई इनका विवरण सौ वर्षों में भी नहीं कहा जा सकता। इस अट्ठाईसवें युग (वैवस्वत) की शेष सन्तानों को सुनिये–भविष्यमें इसी युगमें चालीस राजा और राज्य करेंगे। इसके बाद इस युग का अवसान हो जायगा। सम्राट ययाति के पुत्रों से होने वाले पच्चीस राज वंशों का तथा उनके देशों का वर्णन मैं कर ही चुका हूं। वे सभी बड़े प्रेम से समस्त लोकों के पालक थे। इस वृतान्त को पढ़ने सुनने से दीर्घायु, यश, कीर्ति, धन पुत्रों की प्राप्ति स्वर्ग में अनन्त काल तक निवास इन पांच वरदानों की प्राप्त होती है।

[इति श्री वायु महा पुराण का तुर्वसु वंश वर्णन नामक निन्यानवे वां अध्याय समाप्त तथा तृतीय पाद समाप्त]

अथ उपसंहार पाद प्रारम्भ

सौवां अध्याय

[मन्वन्तरों का वर्णन]

मुनियों ने सूतजी के द्वारा तृतीय पाद सुनकर चौथे पाद को सुनने की अपनी इच्छा प्रकट की।

ऋषि बोले—हे सूतजी ! आपने हमको अनुषंग नामक तृतीय पाद का वर्णन सुनाया है, अब आप हमको चतुर्थ उपसंहार नामक पाद के विषय में सुनाइये, बीते हुये मन्वन्तर के अलावा जो और मन्वन्तर हैं तथा इस वर्तमान मन्वन्तर में जो सप्तऋषि हैं उन सबके विषय में बतलाइये। महात्मा मनु की इस सृष्टि का विस्तार किस प्रकार होता है। इन सब बातों का वर्णन कीजिये।

सूतजी बोले— हे ऋषियो ! मैं आप को इन सब बातों के विषय में बतलाऊँगा । हे विप्रो ! सम्प्रति वर्तमान वैवस्वत मनु तथा भविष्य कालीन सावर्ण मनु का वर्णन कर रहा हूं । भावी मन्वन्तर में जो मुनि होंगे, वे हैं कुशिकनन्दन, गालव, जमदग्नि पुत्र भार्गव, वसिष्ठ गोत्रीय द्वैपायन, शारद्वत वंश में उत्पन्न कृप, अत्रिवंश के दीप्तिमान कश्यप गोत्रीय ऋष्यशृंग, भरद्वाज के गोत्र के द्रोणपुत्र अश्वत्थामा । ये सभी मुनि भावी मन्वन्तर में परम ऋषि के नाम से प्रसिद्ध होंगे । सुतपा, अमिताप, और सुख ये तीन भावी मन्वन्तर देवताओं के मुख्य-गण होंगे । इनमें एक मन्वन्तर में बीस देवता प्रतिष्ठत होंगे, उन सब देवों के इस प्रकार नाम हैं–रित, तप, शुक्रद्युति, ज्योति, प्रभाकर, प्रभास, भासकृत, धर्म, तेज, रश्मि, ऋतु, विराट, अर्विपमान, द्योतन, भानु, यश, कीर्ति, बुध, धृति इत्यादि वीस देवगण सुतपा नामक गण में सम्मलित हैं । प्रभु, विभु, विभास, जेन्ता, हन्ता, अरिहा, रितु, सुमति, प्रमृति, दीप्ति नाम के गण में मिले हुये हैं । मह, महान, देह मुनि, नय, ज्येष्ठ, सम, सत्य, और विश्रुत ये बीस देवगण अभिताप नाम से हैं । दम, दाता, विद, सोम, वित्त, वैद्य, यम, निधि, होम हव्य हुत दान देय दाता तप शम ध्रुव स्थान विधान और नियम ये बीस सावर्णि मन्वन्तर की पहली स्थिति में मुख्य देवगण प्रसिद्ध हैं । ये सभी देवता कश्यप जी के पुत्र माने जाते हैं । इस मन्वन्तर के बाद सावर्णि मन्वन्तर में इन सब देवताओं के स्थान प्रतिष्ठित होंगे । सावर्णि मन्वन्तर में विरोचन के पुत्र वलि इन देवताओं का स्वामी इन्द्र होगा । सावर्णि मनु के नौ पुत्र होंगे । उनके नाम इस प्रकार हैं । वीरवान् अवनीयान निर्मोहसत्यवाक् कृती चरिष्णु अज्य विष्णुवाच सुमति नाम के प्रसिद्ध हैं इनके अलावा दूसरे सावर्णि मन्वन्तर के नौ मनुपुत्रों के नाम से प्रसिद्ध होंगे । भविष्य में ब्रह्माजी के और भी पुत्र सावर्णि मनु में उत्पन्न होंगे । विद्वान मनुष्य उन सब को मेह सावर्णि नाम से देखते हैं । ये सभी मनुगण दक्ष प्रजापति के नाती और उन की प्यारी पुत्री के पुत्र हैं ।

वे परम तेजस्वी देवगण सुमेरु पर्वत पर निवास करेंगे। वे महर्लोक के रहने वाले हैं, वहाँ से आकर सुमेउ पर्वत के निचले भाग में रहने आते हैं। ये महात्मा चाक्षुष मन्वन्तर में पैदा हुए थे।

ऋषियों ने कहा—हे सूतजी! राजा दक्ष की कन्या से पुत्रों की उत्पत्ति किस प्रकार हुई और ये सब शङ्कर, ब्रह्मा, और धर्म आदि की उत्पत्ति किस प्रकार हुई।

सूतजी बोले—हे ऋषिगणों! मैं प्रचेता को नमस्कार करता हूँ और आप को इन सबकी उत्पत्ति के विषय में बताऊँगा। चाक्षुष मन्वन्तर के कुछ शेष रह जाने पर जब वैवस्वत मन्वन्तर शुरू होता है, उसी समय भविष्यकाल के मनुगणों की उत्पत्ति होती है। उनमें पांच सावर्णि मनुगण दक्ष के नाती हैं, चार मनुगण परम ऋषियों से पैदा हुये और एक सार्वण मनु विवस्वान् के संयोग से छाया संज्ञा के पुत्र हैं संज्ञा के सबसे पड़े पुत्र वैवस्वत मनु इन सावर्णि मनु से बड़े हैं। वैवस्वत् के आने पर इन दोनों मनुओं की देवी उत्पत्ति होगी। इन परम यशस्वी मनुगण चौदह माने जाते हैं। वेद, श्रुति पुराण इत्यादि में सभी जगह ये मनुगण परम प्रभावशाली सभी जीवों के अधीश्वर के रूप में माने जाते हैं। इन्हीं राजा मनुगणों में सातों द्वीपों और पर्वत, समस्त पृथ्वी हजारों युग तक स्थिति रहती है। मैं उन मन्वन्तरों में होने वाली प्रजा, तपस्या और सृष्टि विस्तार का वर्णन करूँगा। चौदह स्वायम्भू मनु की सृष्टि को जानना चाहिये।

दक्ष प्रजापति की सुव्रता नाम की कन्या थी, वह परम धार्मिक और यशस्विनी थी वह और कन्याओं से छोटी होने के कारण भी सभी गुणों में श्रेष्ठ और धर्म परायण थी। दक्ष प्रजापति अपनी कन्याओं को साथ लेकर एक बार ब्रह्माजी के पास गये। उस समय प्रजापति ब्रह्माजी धर्म और भव के साथ वराज नाम के लोक में विद्यमान थे। ब्रह्माजी ने दक्ष को भव और धर्म के साथ खड़े देखकर बोले हे सदव्रत धारण करने वाले दक्ष! तुम्हारी इस कन्या से चार पुत्र उत्पन्न होंगे।

वे चारों भावी काल में चारों वर्षों के संस्थापक मनु के रूप में प्रसिद्ध होंगे। ब्रह्माजी को इस प्रकार की बात को सुनकर धर्म और भव ने उस कन्या के साथ समागम किया। सत्य का ध्यान करने वाले इन धर्मात्मा तपस्वियों के मानसिक संकल्प के कारण उस कन्या ने चार सुन्दर पुत्रों को पैदा किया। वे सद्योजात कुमार सभी कार्यों को पूर्ण करने वाले विविध भोगों के उपभोगों में सामर्थ्यवान हैं। इन चारों कुमार पुत्रों को देखकर समस्त ब्रह्मवेत्ता देवताओं ने कहा कि यह हमारे पुत्र हैं इस प्रकार बातें कह कर आपस में देवताओं में छीना झपटी होने लगी। वे चारों पुत्र उन चारों महान प्रभावशाली देवताओं के अंश से उत्पन्न हुए थे, उन सबने आपस में यह सलाह की कि जो इन सबमें जिसके शरीर के समान हो वह उसी का पुत्र समझा जायेगा। स्वरूप, पराक्रम, नाम और वर्ण में जो पुत्र जिसके समान हो, वह उसी का पुत्र है। पुत्र सदा माता पिता के स्वरूप के अनुसार ही होते हैं तथा पराक्रम में भी माता पिता के समान ही होते हैं। ब्रह्माजी इत्यादि देवताओं में आपस में इस प्रकार की सम्मति करके अपने समान आकृति, वर्ण और पराक्रम वाले पुत्रों को ग्रहण किया। वे चारों कुमार ब्रह्मा, धर्म, दक्ष और भव के समान वर्ण वाले थे अतः उनका नाम सावर्ण पड़ा। समागम की भावना के कारण उनकी उत्पत्ति हुई थी, वे मनु नाम से प्रसिद्ध हुये। चाक्षुष मन्वन्तर के बीत जाने पर जब वैवस्वत मन्वन्तर शुरू होता है, तब प्रजापति रुचि के रौच्य नाम का एक पुत्र पैदा हुआ। भूति नाम की स्त्री से जो पुत्र पैदा हुआ उसका नाम भौत्य पड़ा वैवस्वत मन्वन्तर में विवस्वान् के मनु नाम के दो पुत्र पैदा हुए। जिनमें एक वैवस्वत मनु और दूसरे सावर्ण मनु के नाम से प्रसिद्ध हुए। इनमें एक परम ऐश्वयशाली विद्वान वैवस्वतमनु संज्ञाके बड़े पुत्र और दूसरे वैवस्वत मनु सावर्णा छाया रूपधारी संज्ञा के पुत्र माने जाते हैं। सावर्णा जो चार मनुगण उत्पन्न हुये वे महर्षियों से उत्पन्न हुये थे। वे सभी मुनि परम तपानिष्ठ थे। ये भविष्य में अपने अपने मन्वन्तरों में अपने अपने

स्थानमें विराजमान होंगे। प्रथम मनु दक्ष पुत्र मेरु सावर्णि थे. उनका नाम प्रजापति रोहित था। ये भविष्य मन्वन्तर के भावी मनु होंगे। इन के रौवस्वत मन्वंतर में अनेक महात्मा पुत्र पैदा हुये, जिनके गणों के नाम हैं मरिचिगर्भा, सुशर्मा, और पार हुये। इनमें से एक एक गण बारह भागों में विभक्त हैं। ऐश्वर्यसंग्रह. राह, बाहुवश आदि को पारगण जानना चाहिये। अन्यगणों के नाम इस प्रकार हैं। वाजिय, वाजिजित्, अभूति, ककुघया, दधिक्राव, अयपक्क, प्रणति, विजय, मधु तेजस्वान् और अथर्वद्वय ये बारह मरिचिगण के अधीन थे। सुशर्म्मा-गण का वर्णन सुनिये। वर्णा अङ्ग, विश्व, मुरण्य, ब्रजन, अमित द्रव-केतु जम्भोस्थ, अजल्व, शक्रक सुनेमि द्युतपा ये बारह गण सुशर्मा नाम से पुकारे जाते हैं। भविष्यकाल में अद्भुत नाम के देव इन सब का राजा होगा। अग्निपुत्र चन्द्रमा के समान सुन्दर आकृति वाले स्वामी कीर्तिकेय का दूसरा नाम स्कन्द भी है। पुलस्त्य गोत्रीय मेधा-तिथि, कश्यप गोत्रीय वसु भृगुवंश में उत्पन्न ज्योतिष्मान् अंगिरा के पुत्र द्युतिमान वसिष्ठ गोत्र में उत्पन्न वसित, अत्रिकुल में उत्पन्न हव्य वाहन, पौल व वंशीय सुतपा—ये सात रोहित मन्वंतर के ऋषि माने जाते हैं। उन प्रथम सावर्णिमनु के धृतिकेतु दीप्तिकेतु, शाप, हस्त निरा-मय, पृथुश्रव अनीक भूरिम्नद्यु और वृहद्वथ नाम के नौ पुत्र माने जाते हैं। दशम मन्वंतर में धर्म के पुत्र द्वितीय मनु का नाम भव्य पड़ेगा। इन भाव्यमनु के राज्य काल में सुरूमना और विरुद्ध नाम के दो देव-ताओं के गण कहे जाते हैं। ये सभी देवता एक समान कान्तिमान हैं और एक समान धर्म वालों की संख्या सौ है। ऋषियों ने इन देवताओं के लिए पुरुषों का प्रणाम करना बतलाया है। धर्म पुत्र द्वितीय मनु के राज्यकाल में ये देवो के पद पर आसीन होंगे। इन सब देवों के स्वामी राजा इंद्र होंगे। प्रलयगोत्र के हविष्यमान् भृगु के गोत्र में उत्पन्न परम भाग्यशाली सुकीर्ति, अत्रिवंश में उत्पन्न आपोमूर्ति वशिष्ठ वंश

में उत्पन्न आपोमूर्ति, पुलस्त्य कुल में उत्पन्न राजा प्रतिप, कश्यप वंश में उत्पन्न राजा नाभाग और अंगिरावंश में उत्पन्न अभिमन्यु ये सात उस मन्वन्तर के ऋषि प्रसिद्ध होंगे।

सुक्षेत्र, उत्तमौजा, भूरिषेण, वीर्यवान, शतानीक, निरमित्र, वृषसेन जयद्रथ, भूरिद्युम्न और सुवर्चा–ये दस भाव्य मनु के पुत्र होंगे। ग्यारहवें सावर्ण मनु के राज्यकाल में उन परम भाग्यशाली देवगणों के तीन विशेषगण प्रसिद्ध होंगे। उन तीनों के ये नाम हैं— निर्माणरति कामज और मनोजव। उन स्वर्गवासी देवताओं के एक एक गण में तीस तीस देवता होंगे। विद्वान लोग महीने में जिन तीस दिनोंकी गिनतीकरते हैं वेही निर्माणरति देवगण हैं। रात्रिऔर विहंगामात्मक देवगण कामज और मनोजव देवगण के नाम से प्रसिद्ध हैं। भविष्य काल में देवताओं के ये तीन गण मुख्य माने जाते हैं। उन देवताओं के अधीश्वर वृष नाम के देवता होंगे। उस मन्वन्तर के सप्तऋषियों के इस प्रकार नाम हैं— हविष्मान् वपुष्मान, वारुणि भग, पुष्टि, पुलस्त्य कुलभूषण निश्चर और अग्नितेजा ये सात ग्यारहवें देवगण मुख्य माने जाते हैं। सर्ववेग, सुधर्मा, देवानीक, पुरोवह, क्षेमधर्मा, गृहेषु, आर्दव और पौड्रक ये ग्यारहवें मन्वन्तर के सावर्ण मनु के पुत्र माने जाते हैं। बारहवें मन्दन्तर में रुद्रपुत्र ऋत सावर्ण मनु का राज्य काल होगा। उस समय वर्तमान देवगणों के पांच मुख्य गण माने जाते हैं। उनके नाम हरित, रोहित, सुमना सुकर्मा और सुपार ये पांच मुख्य गण माने जाते हैं। ये सभी देवगण ब्रह्माजी के मानस पुत्र माने जाते हैं। इनके एक एक गणों में दस दस देवता रहते हैं। उनमें अरुन्तिज् हीव, विद्वान, पर्वतानुचर, अप, अंशु, मनोजव, ऊर्जा, स्वाहा, स्वधा और तारा ये दस हरित गण के मुख्य गण माने जाते हैं। तप, जानि, भृति, वाचा, वन्धु, रज, राज, स्वर्णपाद, व्युष्टि और विधि येदस रोहित गण माने हैं। अब सुकर्मा के गणों का वर्णन करूँगा। सुपर्वा वृषभ, पृष्ठ, कपि द्युम्न, विपश्चित, विक्रम, क्रम निभृत, और क्रान्त ये दस सुकर्मा गण के नाम से माने जाते हैं। वर्षोदित, जिष्ठ वर्चरवी

द्युतिमान, हवि शुभ हविष्कृत, प्राप्ति, व्यापृथ और दशम–ये सुपारा नाम के देवगणों के नाम से पुकारते हैं। इन देवों के स्वामी यशस्वी ऋतुधामा होंगे। कृति, सुतपा तपोभूर्ति तपस्वी, तपोऽशयान्, तपोरति और तपोमति ये सात ऋषि ऊपरी मन्वन्तर के माने जाते हैं। सावर्णिक मन्वन्तर में देववान्, उपदेव, देवश्रेष्ठ विदूरथ मित्रवान् मित्र विन्दु मित्रसेन अमित्रहा और सुवर्चा ये बारह मनु के पुत्र माने जायेंगे तेरहवें रोच्य नामक मन्वन्तर में तीन ही देवगण होंगे। येसब तपस्वी ब्रह्माजीके मानसपुत्र कहलायेंगे। येही भावी मन्वन्तरमें सोमरस पीनेवाले देवोंके पदपरआसीन होंगे। यज्ञ कर्त्ताओंके साथइस मन्वन्तरमें कुलतैंतीस देवगण होंगे। आज्य, पृषदाज्य ग्रहश्रेष्ठ और दूसरे देवगणों को मिला कर उन देवताओं की गिनती तीस ही होती है। मैं इन सब का अलग अलग वर्णन कर रहा हूं। सम्प्रति प्रयाज और आज्यप नाम के देवगण सभी लुत्रामा गण के नाम से पुकारे जाते हैं। अनुयाज्य और पृषदाज्याशी देवता सुकर्मा नाम से प्रसिद्ध हैं। उपयाज्य नाम के देव गण सधर्मा नाम के गण के अधीन कहे जाते हैं। इन सब देवगणों के स्वामी इन्द्र महा बलशाली दिवस्पति होंगे। ये रुचि के पुत्र और पुलह के नाती माने जाते हैं। अंगिरा पुत्र धृतिमान पथ्यवान् तत्व-दर्शी, निरुत्सक, निष्प्रकम्प, निर्मोह, वसिष्ठ वंशमें उत्पन्नस्वरूप येसात मन्वन्तर के ऋषि कहे जाते हैं। चित्रसेन, विचित्र तपोधर्म धृत, भव अनेकवद्ध, चित्रवद्ध सुरस निर्भय और पृथ–ये रोच्य मन्वन्तर के मनु के पुत्र माने जाते हैं। भविष्य काल के चौदहवें मन्वन्तर में भौत्य नाम के मन्वन्तर में देवों के पाँच गण कहे जाते हैं। उनके नाम इस प्रकार हैं। चाक्षुष कनिष्ठ पवित्र भाजर और वाचावृद्ध। परवर्ती मनु के सातों पुत्रों को चाक्षुव पुकारते हैं। बृहदादि सात समूह को सात कनिष्ठ देवगण कहे जाते हैं। अग्नीध्र, काश्यप, पौलस्त्य, मागध, भार्गव अग्निवा अंगिरसहु, शुचि परम तेजस्वी सुवल ये भौत्य मनु के राज्य काल में बल उत्पन्न होने वाले उनके पुत्र हैं ऊपरी बताये ये चार गण सावर्ण मनु के नाम से प्रसिद्ध हैं। वे ब्रह्मादि चारों देव-

ताओं के पुत्र माने जाते हैं। विवस्वान् के पुत्र मनु भी सावर्ण मनु माने जाते हैं रौच्य और भौत्य येदो मनु पुत्रह और भार्गव गोत्रमें उत्पन्न हुए हैं। इन्हीं भौत्य मनु के राज्यकाल में ही कल्प समाप्त होजाता है।

सूतजी बोले— हे ऋषियो! जब सब मन्वन्तर समाप्त हो जाते हैं, और उनके बहुत से युग बीत जाते हैं तो सृष्टि का संहार होता है। इस प्रकार बतलाया जाता है। अन्तिम मन्वन्तर में ये सात भृगुवंश में उत्पन्न देवगण इकहत्तर युगों तक समस्त त्रिलोकी में राज्य करेंगे। इसके बाद अन्त में पितरों, मुनियों, सप्तऋषियों, यज्ञ कर्म, यजमान और मन्त्रों के साथ तीनों लोकों को छोड़कर सर्वशक्तिमान देवता महर्लोक को चले जायेंगे। इस प्रकार इन सबको छोड़कर चले जाने पर तो मन्वन्तर समाप्त होकर यह त्रैलोक निराधार होजायगा। हे ब्राह्मणो! उस समय सभी स्थान शून्यमय हो जायगा। स्थानी देवगण भी अपने अपने स्थान छोड़ देंगे। तारा, ग्रहन क्षत्र निराधार होकर नष्ट हो जायेंगे। त्रैलोक्य की सभी सम्पत्तियों के नष्ट हो जाने पर इन्द्र इत्यदि मुख्य देवता चाक्षुष इत्यदि सभी देवगण महर्लोक में जाकर कल्पपर्यन्त तक रहेंगे। इस तरह महर्लोक में कल्पवासी दूसरे देवों के साथ मिलने पर वे चौदहों मनुगणों के साथ शरीर जनलोक को चले जाते हैं। देवताओं के महर्लोक से जन लोक में जाने के बाद केवल स्थावर जीव शेष रह जाते हैं। मह भू इत्यादि सभी स्थान शून्य हो जाते हैं। देवगण कल्पपर्यन्त तक रहने के बाद अन्यान्य देवताओं की तरह स्थानों को प्राप्त कर ऊपर चलेजाते हैं। उस समय ब्रह्मा देवताओं, ऋषियो, पितरों, दानवों का संहार करके युगक्षय पर महती वृष्टि के द्वारा सृष्टि की पुनः स्थापनी करते हैं। एक हजार चतुर्युग का ब्रह्माजी का एक दिन होता है और इसी तरह एक हजार चतुर्युग की ब्रह्माजी की एक रात होती है। जीवों के ये तीन नैमित्तिक, प्राकृतिक और आत्यन्तिक प्रलय बतलाये जाते हैं। ब्रह्माजी द्वारा किया हुआ कल्पदाह प्रसंयम और नैमित्तिक है।

जिस प्रलय में भूतों के कारण असाधारण कारणों का क्षय होता है। उसको प्राकृतिक प्रलय कहते हैं। उस महान प्रलय के बाद करणीभूत उपादानों का असितत्व एक साथ नष्ट होजाता है। उनको आत्यन्तिक प्रलय कहते हैं। ब्रह्माजी उन देवताओं का संहार करने के बाद अपने एक दिन के बाद पुनः सृष्टि का प्रलय करते हैं। उस समय शयन, करने की इच्छा से प्रजापति ब्रह्माजी प्रजाओं का संहार करते हैं। इस प्रकार एक हजार युग के बीत जाने के बाद युगक्षय के प्राप्त होने के बाद प्रजापति आत्मस्थ सभी प्रजाओं की सृष्टि का विस्तार करते हैं। उस समय घोर अकाल पड़ता है और सौ वर्ष से वर्षा नहीं होती, जिसके कारण पृथ्वी पर बचे हुये प्राणी भी मृत्यु को प्राप्त होते हैं। विभावसु सात रश्मियों से युक्त होकर उदित होते हैं, और वे अपनी तीखी किरणों से समस्त जल राशि को सोख लेते हैं, उस समय उनकी किरणों का तेज असह्य होजाता है। वे किरणें हरे रंग की और बहुत तेजमय होजाती हैं। वे सात भागों में बट जाती हैं। वे धीरे-धीरे समस्त पृथ्वी जलराशि में व्याप्त होकर बदल जाती है। भौम, काष्ठ वन, तेज, प्रभृति, में पुनः परिव्याप्त होकर वे किरणें बहुत तेज जल उठती हैं। ये सातों भास्कर बहुत तृप्त हो जाते हैं।

ऋषि बोले—ऋषियों की इस प्रकार बात सुनकर भगवान वायु देव बोले—हे ऋषियो! मनुष्य के चार सौ बत्तीस करोड़ उन्यासी लाख अस्सी हजार वर्षों में प्रलय होता है। मानव मान से इतने ही वर्षों बाद प्रलय की अवधि बतलाई है। ब्रह्माजी का एक दिन एक करोड़ बीस लाख नौ हजार से अधिक दिव्य वर्षों का होता है। प्रलय के समय पर सात सूर्य देव उदित होते हैं। सभी लोकों में चारों प्रकार की प्रजायें महाभूतों में विलीन होजाती हैं। सारा संसार जल मय होजाता है। स्थावर, जंगम, जीवनिकाय सब नष्ट होजाते हैं। प्रजापति सबका संहार करके शान्त होजाते हैं। दग्ध लोक समूहों में प्रकाश का अभाव होकर अन्धकार ही अन्धकार होजाता है। ईश्वर रूप में स्थित यह पूरा संसार समुद्र रूप में बदल जाता है। जब तक

भगवान का दिन रहता है, तब तक एकार्णवरूप संसार होजाता है। इसके बाद उनकी रात्रि जल की स्थिति तक रहती है इसके बाद दिन माना जाता है। ये दिन रात क्रमपूर्वक बदलते रहते हैं। इस समस्त संसार में जितने भी चराचर जीव हैं वे सभी विनिष्ट होजाते हैं। इस कारण प्रलय को आभूतसंप्लव कहते हैं। प्रजाओं में सबसे पहले भूत पैदा होता है, अतः प्रजापति ब्रह्माजी भूत ही माने जाते हैं। उन्हीं भगवान से सारे संसार का नाश होता है, इसीलिये भी प्रलय को आभूत-संप्लव कहते हैं, अतीत, वर्तमान, भविष्य की प्रजाओं को त्रैकोलिक आयु परिमाण दिव्य संख्या से अवर्द्धाद्ध माना जाता है। प्रजापति ब्रह्माजी की आयु दो पदद्धि काल की मानी जाती है। इतने ही समय तक उनकी स्थिति रहतीहै। इसको प्रजापति ब्रह्माजी का प्रतिसर्ग होता है। जिस प्रकार तेज हवा के झोंके से दीपक बुझकर शान्त होजाता है उसी प्रकार प्रतिसर्ग द्वारा ब्रह्माजी भी शान्त होजाते हैं। उस समय जब अव्यक्त में महत् विलीन होजाता है और महदादि सब महेश्वर में समा जाते हैं। तब गुण साम्य होजाता है। मैंने आप लोगों को प्रलय का वर्णन सुना दिया, यही ब्रह्माजी का नैमित्तिक प्रलय कहा जाता है। जो मनुष्य इस वर्णन को नित्य सुनता अथवा सुनाता है उसको परम सिद्धि प्राप्त होती है इसके सुनने से विद्याओं का ज्ञान होता है क्षत्रिय मनुष्य को युद्ध में विजय प्राप्त होती है वैश्य को धन प्राप्त होता हैं, शूद्र को सुख प्राप्त होता है। ब्राह्मणों को इसके महात्म्य से विद्या प्राप्त होती है। १००

(श्री वायु महापुराण का मन्वन्तरादिवर्णन नाम का सौ वां अध्याय समाप्त हुआ)

एक सौ एक अध्याय

[भूर्लोकादि की व्याख्या]

हे ऋषियो ! असामान्य चरित्र वाले द्विजाती लोग जो यज्ञादि का शास्त्र सम्मत अनुष्ठान करते हैं। वे सब देवों के साथ महर्लोक में निवास करते हैं। मैंने पूर्व प्रसङ्ग में जिन जिन चौदह मनुष्यों का

वर्णन किया है वे भूत अविधत और वर्तमान समय के मनु हैं। ये मनु ऋषियों गन्धर्वों और राक्षसों के साथ प्रत्येक मन्वन्तर में पुनः जन्म लेते हैं। देवर्षि,सप्तर्षि देवगण, पितृगण तथा धार्मिक विचार वाले द्विजाति मात्र क्रमशः महर्लोक में आश्रय ग्रहण करते हैं। अभिमान रहित, सत्य-वादी योग में तत्पर, श्रोतस्मार्त कर्मों में श्रद्धालु, वर्णाश्रम धर्म में निष्ठावान लोग मन्वन्तर के समाप्त होने पर अपने अपने अधिकारों से निवृत होकर महर्लोक में आसित होते हैं।

ऋषि बोले—परम सामर्थ मातरिश्वन्! आप जिस महर्लोक की चर्चा कर रहे हैं वह कैसा है। हमारे विचार से ऐसे प्रत्येक लोग में बहु संख्यक लोग निवास करते होंगे। अतः उन महात्माओं के जितने लोक हैं, उनको आप बतलाने को कृपा करें। क्योंकि आप हमारे ऊपर प्रसन्न हैं और इन बातों को सत्य सत्य जानते हैं। मुनियों की इस प्रकार विनम्र वाणी सुनकर वायुदेव मधुर वाणी में बोले।

वायु बोले—हे ऋषियो! ये जो चौदह लोक ऋषियों ने कहे हैं उनमें सात कृत और सात अकृत लोक हैं। भूआदि सात लोक कृत हैं। सात प्राकृत लोक हैं। पृथ्वी, अन्तरिक्ष, दिव्य और मह ये लोक आर्णविक नाम से कहे हैं। ये लोक क्षय और वृद्धि वाले कहे हैं। नैमित्तिक लोक प्रलय पर्यन्त स्थिर रहते हैं। जन, तप, सत्य, ये तीन लोक एकान्तिक और सत्वगुण वाले हैं। ये कल्प तक रहते हैं। सात व्यक्त कहे जाने वाले लोक हैं वे हैं–भू भुव, स्वर, मह, जन, तप और सत्य इसके बाद निरालोक है। ब्रह्मा ने भूः ऐसा कहा तब भूर्लोक की, भुवः कहने पर भुवर्लोक की स्वः कहने पर स्वर लोक की रचना हुई। भू की पार्थिव लोक नाम से भुव की अन्तरिक्ष नाम से स्वर की स्वर्ग लोक नाम से प्रसिद्धि हुई है। अग्नि भूतों का यानी पार्थिव वस्तुओं का अधिपति है। उसे भूतपति नाम से कहा गया है। वायु अन्तरिक्ष के अधिपति हैं। अतः वायु भुवस्पति नाम से कहे गये हैं। भव्य और स्वर लोक का अधिपति सूर्य हैं। इससे वे दिवस्पति नाम से कहे गये हैं। ब्रह्मा ने ऐसा कहा कि–महः तो महर्लोक की सृष्टि हुई। देवगण

अपने अधिकार काल के समाप्त होने पर महर्लोक में जाकर ही रहते हैं। पांचवां जनलोक है। इस लोक से स्वायम्भुव मनु आदि की प्रजाओं (सन्तानों) का जनम अर्थात् उत्पत्ति होती है। इसीलिये इसे जनलोक कहते हैं। हमने पूर्व प्रसंग में स्वायम्भुव मनु के वंश का विस्तार से वर्णन तो किया ही है वे सब कल्प के समाप्त होने पर तपोलोक में आश्रय प्राप्त करते हैं। क्योंकि तपोलोक कल्पांत में भी स्थिर रहता है, ऋभु एवं सनत्कुमार आदि देवगण जो अर्ध्वरेता ब्रह्मचारी हैं। वे तपोलोक में ही स्थिर रहते हैं। सत्य—यह शब्द भी ब्रह्माजी द्वारा कहा हुआ है। इसका प्रयोग सत्ता मात्र में होता है। इसी से ब्रह्मलोक को सत्य लोक भी कहते हैं। यह अत्यन्त प्रकाशमान सातवां लोक है।

सभी देवगण गन्धर्व अप्सरायें यक्ष औरगुह्यकों के साथ स्वर्लोक में निवास करते हैं, सर्प, भूत, पिशाच, नाग एवं मनुष्य गण पृथ्वी लोक पर निवास करते हैं मरुद्गण, वायुगण, रुद्रगण कुछ देवता दोनों अश्विनीकुमार ये सभी यद्यपि किसी एक स्थान या लोक में निवास नहीं करते फिर भी उनका प्रमुख स्थान भुवर्लोक ही है। स्वर्ग में निवास करने वाले आदित्यगण, ऋभुगण विश्वेदेवगण साधारण पितरगण एवं अंगिरा गोत्रीय ऋषिगण, भुवर्लोक में आकर स्थान प्राप्त करते हैं। ये सभी देगवण विमानों में चढ़कर ताराओं एवं ग्रह पिण्डों का आश्रम भुवर्लोक ही है यह भुवर्लोकादि का वर्णन ब्रह्मा के द्वारा उच्चारण किये शब्दों के द्वारा किया गया। यह महर्लोक से भूलोक तक की चर्चा ऊपर की गई है। ये सब ताराओं से शुरू हुये हुये हैं। ये परस्पर शुद्ध हैं तथा एक दूसरे से सर्वथा अलग हैं। शुक्र से लेकर चाक्षुष मनु तक वे सभी कल्पान्त में इसी महर्लोक में निवास करते हैं। ऋभु एवं सनत्कुमार आदि ऋषि गण, तपोलोक में निवास करते हैं। प्रलयकाल में भूलोक से लेकर महर्लोक तक जब सभी सात सूर्य की रश्मियों के द्वारा दग्ध हो जाते हैं तब मरीचि, कश्यप, दक्ष, स्वायंभुव अंगिरा, पुलह, क्रतु आदि प्रजापतिगण एक साथ जनलोकमें निवास करते हैं। सातवां सत्य लोक है। जहां पर पहुंचकर फिर जन्म नहीं लेना पड़ता।

इस सत्यलोक को कभी विनाश नहीं होता है ध्रुव से लेकर जनलोक तक महर्लोक है इसी प्रकार अन्यलोक भी हैं। भूलोक में अन्तभक्षी रसास्वादी लोग रहते हैं। भुवलोक में सोमरस पीने वाले लोग बसते हैं। स्वर्ग लोक में आज्य का पान किया जाता है। महर्लोक में रहने वाले मनोवांछित सिद्धियां प्राप्त होते हैं। देवगण यज्ञों द्वारा सन्तोष प्राप्त करते हैं हे विप्रो! आप जनलोक तथा नीचे के चारों लोकों की चर्चा संक्षेप से सुन चुके अब उसका वर्णन विस्तार से सुनिये।

वायु बोले— हे ऋषियो! सर्वप्रथम मरीचि, कश्यप, दक्ष, वसिष्ठ अंगिरा, भृगु, पुलस्त्य, प्रलह और कृतु आदि ऋषिगण ब्रह्माजी के मानस पुत्र हुये। अपनी अपनी प्रजाओं का विस्तार करके वे पुनः जनलोक में ठहरगये। कल्प के अवसान में जब भू भुव स्वर लोक प्रचण्ड अग्नि की ज्वालाओं से दग्ध हो जाते हैं तो महर्लोक के रहने वाले यमादि देवगण सूक्ष्म शरीर से जनलोक में निवास करते हैं। वहां पहुँचने पर वे लोक जनलोक के निवासियों की भांति सामर्थ्यवान रूप वान एवं ऐश्वर्यवान हो जाते हैं। जगत के विनाश होने तक वहां उसी रूप में निवास करते हैं। ब्रह्मा की महारात्रि समाप्त होने पर उनके दिन का प्रारम्भ होता है। तब वे मनु मरीचि आदि ऋषिगण पूर्ववर्ती पुरुषाओं की भांति पुनः जन्म लेते हैं। देव वंशों की सात विभूतियां कही गई हैं। इनमें से चार कल्पज देवता बीत चुके तीन शेष हैं। ये अपने अपने कथित तप के प्रताप से वैराजलोक को प्राप्त होते हैं। वैराज लोक में जो लोग निवास करते हैं वे दस बार जन्म धारण करते हैं। इस प्रकार देवताओं के हजारों युग समाप्त हो गए हैं। ऋषियों के साथ मृत होकर वे देवगण वैराज लोकों में निवास करने के बाद ब्रह्मलोक को प्राप्त होते हैं।

सूत जी बोले— हे ऋषिगणो! देवताओं का इस प्रलय एवं सृष्टि का वर्णन विस्तार से कथन नहीं किया जा सकता। काल का कोई आदि नहीं है। संख्याओं की भी कोई गिनती नहीं है जैसा मैंने आप लोगों से वर्णन किया वैसा ही वैसा सब कुछ हुआ है इसमें सन्देह नहीं।

ऋषि बोले—हे सूतजी ! वैराज नामक लोकों में निवास करने वाले जो आहार करते हैं। तथा जो पराक्रमी हैं, जितने समय तक वे स्थित रहते हैं ये सब बातें यथार्थतः सुनना चाहते हैं सो कृपा कर बतलाइये।

सूतजी बोले—हे ऋषियो ! जो धर्माचरण द्वारा परम शुद्ध एवं निर्विकार लोग होते हैं वे उस वैराज नामक लोक में दस कल्प तक निवास करते हैं। वे सब परम ज्ञानी सूक्ष्मदर्शी, सूक्ष्म, स्वच्छ शरीर वाले होते हैं। अनन्त काल तक वहाँ रहने के कारण उनके शरीरों से भूतों का सम्पर्क नहीं होता है। दस कल्प के बाद वैराज लोक का परिवर्तन का समय आता है, तब वे वैराज लोक में निवास करते हैं शुद्ध बुद्धि योगाभ्यास परायण सनत्कुमार, सिद्धगण उस लोक को छोड़ने के एक साथ उत्सुक होकर आपस में वे इस प्रकार बातचीत करते हैं हे प्रतिभाशालियो ! अब हम लोग प्रणव का सहारा लेकर ब्रह्मलोक में निवास करेंगे, उससे हम सबों का कल्याण होगा। इस प्रकार वे योगधर्मा महात्मा योगाभ्यास द्वारा आत्मा को परमात्मा ब्रह्म में सन्नियोजित करके ब्रह्म पद की प्राप्ति करते हैं और उसी स्थान में लीन होजाते हैं। सब प्रकार की सुख देने वाली कल्पनाओं से पूर्ण अनामय ब्रह्मलोक को प्राप्त ब्रह्मानन्द में मग्न होकर वे अमृत्व को प्राप्त करते हैं। वे ब्रह्मलोक में प्रसिद्ध हैं उनके पुरोहित ब्रह्माजी हैं वहाँ के रहने वाले शुद्ध बुद्धि विचार वाले परम तपोनिष्ठ होते हैं। बीत राग, के जीतने वाले क्रोध को निर्मोह, सत्यवादी, शान्त, आत्मा को वश में रखने जितेन्द्रिय, दयावान् पवित्रात्मा वाले मनुष्य को ही ब्रह्मलोक प्राप्त होता है। यह ब्रह्मपद परम दिव्य गुण सम्पन्न और आकाश परम चमकीला है, वहाँ जाकर वे अमर होकर ब्रह्माजी के साथ निवास करते हैं और सुख का अनुभव करते हुये शोक से छूट जाते हैं।

ऋषि बोले—हे महामति सूतजी ! ये पराद्ध क्या है ? पर किसको कहते हैं। आप कृपा करके हमको इनके विषय में बतलाइये।

सूतजी बोले— हे ऋषियो ! मैं आपको पराद्ध और पर के बारेमें बतलारहा हूँ। दस हजार का एक अयुत होता है। सौ हजार का एक नियुत होता है। दस सौ हजार वर्ष का दस नियुत की एक कोटि होती है। दस करोड़ का एक अरब होता है, सौ करोड़ का एक पदम होता है हजार करोड़ का एक खर्व होता है, दस हजार करोड़ का एक निखर्व होता है, सौ हजार करोड़ का एक शङ्ख होता है हजार हजार कोटि के गुणा करने पर उसके गुणनफल को समुद्र कहते हैं। सहस्र अयुत कोटि की एक मध्य, सहस्र नियुत कोटि का एक अन्त और सहस्र कोटि का एक पराद्ध होता है और दो पराद्ध की संख्या को एक पर कहते हैं। सौ की संख्या को परिद्दढ और सहस्र को परिपदमक कहते। ऋषियों ने बतलाया है कि ब्रह्मा के कल्प काल की परिमाण संख्या सृष्टि शुरू होने के समय तक एक पराद्ध मानी जाती है। इसके बाद एक पराई काल सृष्टि रहित स्थिति में बीत जाता है। उसके बाद पुनः सृष्टि शुरू होती है। इस तरह एक सृष्टि के शुरू के समय से दूसरी सृष्टि के शुरू होने तक दो पराद्ध या एक पर काल होता है। मैंने आपको पर और पराद्ध काल को बतला दिया है। महर्षियों की इस प्रकार वाणी को सुन कर वायु देव ने मीठे स्वर में ब्रह्मलोक के बारे में जो कुछ सुना और देखा था, मैं उसी के विषय में आपलोगों को बतला रहा हूँ।

वायुदेव बोले— हे ऋषियो ! मैं आप लोगोंको अन्यान्य वक्तव्य के विषय में बतलाऊंगा। अव्यक्त की अपेक्षा व्यक्तभाग महास्थूल होता है। महत् के दस भाग जितना स्थूलभूतादि बताये जाते हैं, भूतादि से दस भाग अधिक स्थूल परिमाण कहाजाता है। यह परिमाण भी बहुत सूक्ष्म होता है। लोक में सबसे सूक्ष्म परम अवेध वस्तु होती है, उसी को परमाणु कहते हैं। सूर्य की किरणों में जो बहुत सूक्ष्म धूल के कण दिखाई देते हैं वे प्रथम परमाणु होते हैं ऐसे आठ परमाणुओं का जब आपस में मिलन होता है उसे तब त्रसरेणु कहते हैं, इस को पदन रज भी कहते हैं।

आठ त्रसरेणुओं को बलाग्र कहते हैं आठ बलाग्रों को एक लिक्षा कहते हैं। आठ लिक्षा की एक यूका होती है, आठ यूका को एक जब कहते हैं। आठ जब का एक अंगुल होता है। आठ अँगुलियों के पोरों को एक वितस्ति कहते हैं। इक्कीस पोरों की एक रत्नि होती है। चौबीस अंगुल का एक हाथ होता है। ब्यालीस अंगुल का एक किष्कु होता है। छियानवें अंगुल का एक धनुष होता है। यह धनुष दो कोस के परिमाण को नापने के काम आता है। विद्वान लोग दण्ड धनुष युग नाली को एक समान ही बतलाते हैं। ये चारों परिमाण छियानवें अँगुलों के माने जाते हैं, तीन सौ धनुष का एक नल्व होता है और दो सहस्र धनुष का दो कोस होता है। इसी योजन के परिमाण द्वारा ब्रह्मलोक की दूरी नापी जाती है। जैसे—

पृथ्वी से एक लाख योजन पर सूर्य का निवास स्थान है सूर्य से सौ हजार योजन पर चन्द्रमा का निवास स्थान है। चन्द्रमा से हजार योजन दूर नक्षत्रों का प्रकाश होता है, इस नक्षत्र लोक से मेरु मण्डल दो लाख योजन दूर है। इन मण्डल से ऊपर एक ग्रह है वह भी दो लाख योजन दूर है। सभी तारागणों में बुध सबसे निचले भाग में रहते हैं। बुध के निवास स्थान से ऊपर शुक्र का निवास स्थान है। शुक्र से ऊपर मंगल का निवास स्थान है, मङ्गल के ऊपर वृहस्पति जी का निवास स्थान है, वृहस्पति जी से ऊपर शनैश्चर जी का निवास स्थान है। शनैश्चर जी से एक लाख योजन दूर सप्तऋषियों का निवास स्थान है। इन सप्तऋषियों से एक लाख योजन पर ध्रुवजी का निवास स्थान है। जनलोक से चार कोट योजन दूर तपोलोक है। तपोलोक में वैराज नाम के देवता निवास करते हैं। तपोलोक से छः योजन दूर सत्यलोक स्थित है, वहां पर जन्म मरण विहीन सिद्ध लोग निवास करते हैं। इनका सिद्धों को ब्रह्मलोक कहते हैं सिद्धों का ब्रह्मलोक से कभी पतन नहीं होता। वे ब्रह्माजी की उपासना में लीन रहते हैं। मैंने आप लोगों को लोकों की दूरी इत्यादि का वर्णन तथा ध्रुव लोक से ऊपर बसे हुये नक्षत्र ग्रहादियों

के निवासस्थल का वर्णन सुना दिया है। अब मैं आपको अधोगति को प्राप्त होने वाले जीवों के निवास स्थान का वर्णन करूँगा, जिस जगह को घोर पाप कर्म करने वाले पापी मनुष्य अपने कर्मों के अनुसार प्राप्त करते हैं।

रौरव, रौध, सूकर, ताल, तप्तकुम्भ, महाज्वाल, शवलविभोचन, कृमी, कृमिभक्ष, लालाभक्ष विशसन, अधःशिरा पूयवह, रुधिरान्ध वैतरण कृष्ण, असिपत्रवन अग्निज्वाल, महाघोर, संदेश, श्वभोजन तम कृष्णासूत्र लोह, असिज, अप्रतिष्ठ, वीचिअश्व इत्यादि घोर अन्धकार मय नरक लोक हैं। इन सबके स्वामी यमराज हैं। इन्हीं नरकों में पापी लोग अपने कर्म के अनुसार पृथक पृथक निवास करते हैं। जो मनुष्य झूठी गवाही देता है और झूठ बोलने में जो निरत रहता है या किसी कारण वश एक पक्ष का समर्थन करता है वह मनुष्य घोर रौरवनरक में जाता है। गौ की हत्या करने वाला गर्भ की हत्या करने वाला किसी के घर या गांव में आग लगाने वाले पापी मनुष्य को रौध नाम के नरक में जाना पड़ता है। जो मनुष्य ब्राह्मण की हत्या करता है, शराब पीता है सोने को चुराता है वह पापी मनुष्य सूकर नाम के नरक में स्थान प्राप्त करता है, जो मनुष्य क्षत्रियों की हत्या करता है, या किसी भी जाति के मनुष्य को मारता है गुरू की स्त्री के साथ समागम करता है वह घोर ताल नाम के नरक में जाता है। जो पापी मनुष्य बहिन के साथ व्यभिचार करता है या वह राजा की हत्या करता है वह तप्त कुम्भ नामक नरक में स्थान प्राप्त करताहै। एक दूसरेके घोड़े को चुरा कर बेचने पर तप्त लौह नाम के नरक में जाता है। जो अपनी स्त्री को बेचता है तथा अपने अनुगामी भक्त को छोड़ देता है, अपनी पुत्री या पुत्र वधु के साथ समागम करने वाले को महा ज्वाल नाम के नरक में स्थान प्राप्त होता है। जो मनुष्य वेदों का विक्रय करता है अपने गुरुओं की बुराई करता है वह पापी मनुष्य शबल नाम के नरकको प्राप्त होता है। जो मनुष्य किसी के दीवार भवन इत्यादि में छेद करता है, वह विमोह

वह विमोह नाम के नगर में स्थान पाता है। जो किसी का दुख चाहता है वह कीटलोह नाम के नरक में जाता है। जो मनुष्य देवता या ब्राह्मण से द्वेष करता है, वह कृमिभक्ष नाम के नरक में स्थान प्राप्त करता है। जो मनुष्य किसी ब्राह्मण, मित्र और कन्या के सामने अकेला भोजन करता है, वह अतिशय दुर्गन्धमय लालाभक्ष नामक नरक में जाता है। जो पापी मनुष्य काराकर्त्ता होते हैं, दूसरों का धन चुराते हैं, अच्छी दवा जानते हुए भी जो लालच वश बुरी दवादेते हैं वे मनुष्य विशसन घोर नरक में जाते हैं। जो किसी के बाग बचीचे में आग लगा देते हैं, जो अपने असत् कर्म से धन कमाते हैं, जो मनुष्य नीच कर्म करने वालों से दान लेता है या जिस यज्ञादि कार्य करने का अधिकार नहीं है उनसे यज्ञ कर्म कराने वाले को अधोमुख नाम के नरक में स्थान प्राप्त होता है। दूध, मास, मदिरा लाक्षा, सुगन्धित पदार्थ, तैल, इत्र, रस और तिल आदि वस्तुओं को बेचता है वह पूयवह नाम के नरक में जाता है। जो मनुष्य मुर्गों को मारता है, बिल्ली और सूकर का वध करता है, पक्षियों और बकरों को मारता है वह पापी मनुष्य भी पूयवह नाम के नरक में जाता है।

जो मनुष्य ब्राह्मण होकर भी बकरा, बकरे, भेड़, महिष, इत्यादि को पालता है, चक्र और ध्वजा को धारण करता है गांवों में इधर उधर झूठमूठ ही यज्ञ करता फिरता हो, जो रंगों की बिक्री से जीविका लाता है, जो मनुष्य मित्रों की हत्या करता है, वह रुन्धिरान्ध नामके में निवास करता है। जो मनुष्य एक ही लाइन में कराने वालों में भेद रखता है वे पापी मनुष्य घोरविड्भुज नामक नरक जो मनुष्य सदा झूठ बोलता है तथा दूसरे को गाली कीर्ण नाम के नरक में जाता है। इसी प्रकार पाप कर्म ो उनके पाप कर्म के अनुसार नाना प्रकार के घोर है। इन सब नरकों में रौरव नरक सबसे महान से शीतल और भीतर से ऊष्ण होता है। का नरक स्थित है।

हैं
वह मूत्र।
ाले मनुष्यों
में जाना पड़ता
विस्तृत है, यह ऊपर

इस पृथ्वी तल पर सात नरक लोक स्थित हैं। अधर्म से उत्पन्न होने वाले नरकों का नाम अन्धतामिस्त्र है, दूसरा महा रौरव नाम का नरक है तीसरा कालसूत्र नाम का नरक है चौथा अप्रतिष्ठ नाम का नरक है, पांचवां अवीची नाम काघोर नरक है छठा लोह पृष्ठ नाम का नरक है सातवां अविधेय नाम का नरक है। अतिशय घोर दुखदायीप्रद होने के कारण इसका रौरव नाम पड़ा है। ऊपर रहने वाले सभी देवता और नीचे रहने वाले सभी प्राणी अपने धर्म के अनुसार शरीर ग्रहण करते हैं, इन औपोत्तिक कर्मों के अनुसार फल भोगने के लिए वे शरीर ग्रहण करते हैं। देवता लोग इन अधोभाग में स्थिति नरक में रहने वाले प्राणियों को औंधे मुख हुए देखते हैं और इसी प्रकार नरक के प्राणी भी देवताओं को उल्टे मुख देखते हैं। वायुदेव की इस प्रकार बातों को सुनकर यज्ञकर्त्ता ब्राह्मणों ने कहा—

ऋषि बोले—हे वायुदेव! इस लोकालोक में निवास करने वाले प्राणियों की संख्या कितनी है। वे कौन हैं, आप हमको इन सबके बारे में बतलाइये।

वायु बोले—हे ऋषियो! उन सब प्राणियों की संख्या बताना सम्भव नहीं है। वे प्रवाह अनादि हैं वे अनन्त हैं हम इतना ही कह सकते हैं उनके विषय में कि वे अनन्त हैं। जो पाप कर्म में निरत रहने वाले दुरात्मा मनुष्य मृत्यु के वश में होकर उन नरकों में निवास करते हैं। सात्विक गुण सम्पन्न धार्मिक मनुष्य परम दुर्लभ होते हैं। धार्मिक मनुष्यस्वर्गलोक में निवास करते हैं। स्वयम्भू प्रजापति ब्रह्माजी ने इनसब आनुपातिक की संख्या निश्चित की है, उसके विषय में मनुष्यों की निश्चित की गई संख्या की निबृति है, केवल ब्राह्मी संख्या ही ऐसे स्थलों पर प्रमाणभूत है।

ऋषि बोले—हे वायुदेव! आपने मह, जन, तप, सत्य, भूत, भाव्य इन सातों लोकों की स्थिति एक के बाद एक की बतलाई है, अब आप बताइये कि इनमें क्या अन्तर है।

वायुदेव बोले—हे ऋषियो! योगी मनुष्य अपने योग बल द्वारा,

मनीषीगण अपने तर्क द्वारा क्रियानिष्ठगण अपने सद्धकर्म द्वारा दर्शन करते हैं। साधु सज्जन पुरुष भगवान के निवास स्थल का प्रत्यक्ष दर्शन करते हैं। ज्ञान, वैराग्य, ऐश्वर्य, तपस्या, सत्य, क्षमा, धैर्य, दर्शकित्व, अधिष्ठानत्व और आत्मज्ञान ये दस शाश्वत धर्म परमात्मा भगवान में नित्य स्थित रहते हैं। वह प्रभु है। योगि जनों की योगाग्नि भी उसी परब्रह्म की आज्ञा से उद्दीप्त होती है। वह प्रभु शरीर धारण करके सभी का उपकार करते हैं। सम्पूर्ण लोकों का बनाने वाला ऐश्वर्य शाली परमात्मा लोक की सृष्टि और लोक की विधिवत स्थिति के लिये ही पृकृति की सहायता अपने शरीर द्वारा ब्रह्मलोक और ब्रह्माण्डादि का निर्माण करते हैं।

उन दोनों के बीच भाग में एक बहुत सुन्दर स्थान है, वह स्थान मनोमय नाम से प्रसिद्ध है। वह उस तेजस्वी शिव ईश्वर का पुर है। उस स्थान में जन्ममरण से डरने वाले मनुष्यों का स्थान है। हे श्रेष्ठ ब्राह्मणो ! वह शिव नामक पुर का विस्तार सौ हजार योजन तक है। इस महापुरी के चारों तरफ सुवर्ण की चहार दीवारी बनी है। उसकी चमक चारों ओर से चकाचौंध करती है। उस पुरी में चार द्वार बने हैं वे चारों द्वार सुवर्ण के बने है उन द्वारों की मोतियों की लड़ियां शोभा बढ़ा रही हैं। उस पुरी में मृत्यु का भय है न बुढ़ापे का ही। इस रम्यपुरी की सुन्दरता त्रैलोक्य और कहीं जगहपर नहीं है। वह पुरी दसों दिशाओं में एक लाख योजन तक फैली हुई है। महादेव जी, वृषभध्वज, की वह पुरी अपने तेज से स्थित है। उस सुवर्णमयी पुरी की सृष्टि मानसिक भाव भूमिपर हुई है। वृषभध्वज योगाभ्यास परायण महात्मा है, जिनका चित्त कभी चंचल नहीं होता, वे ही ध्यान रख कर वृषभध्वज इस पुरी का दर्शन करते हैं। वहां पर अनेक इस प्रकार के रम्य स्थान बने हैं। वहां के सभी गृहों में कथा, गाना, बजाना, स्तोत्र इत्यादि मनोरंजन कार्य कर्म होते रहते हैं। इस प्रकार के अनेक सुन्दर भवनों में एक सुन्दर भवन है। वह भवन हजार स्तम्भों से बना है उसमें अनुपम रत्न जड़े हुये हैं।

उन रत्नों में से बहुत से रत्न चन्द्रमा के समान शुभ्र स्फटिक मणि के समान निर्मल, वैदूर्य मणि के समान तेजवान उदयकालीन सूर्य के समान, सुन्दर और अग्नि और सुवर्ण के समान कान्तिमान हैं। वायुदेव के इस प्रकार वर्णनको सुनकर ऋषि बोले।

ऋषियों ने कहा— हे श्रेष्ठ! उस पुर में शिव के अनुगामी महात्मा कौन कौन से रहते हैं जो वहां सभी प्रकार के सुखों का आनन्द लूटते हैं?

वायुदेव बोले— हे ऋषियो! भगवान शंकरजी में जो मनुष्य श्रद्धाभक्ति रखते हैं और सदा लज्जाशील होकर तपस्या के दुखों को सहन करते हैं जो पराक्रम शील हैं, अलोलुप, मिताहार हैं, जितेन्द्रिय हैं, सुख दुख इत्यादि से परे हैं सबके साथ मित्र या बन्धु का सा व्यवहार करते हैं। मत्सरादि से विहीन हैं, भावप्रवण है सभी जीवों में दया करने वाले हैं तथा सबके साथ एक सा व्यवहार करते हैं तथा जो मनुष्य अनन्य चित्त होकर शिवजी की शरण में जाते हैं उन्हीं मनुष्यों को रुद्र का सानिध्य पद प्राप्त होता है। सभी शिवपुर निवासी अग्नि के समान मुख वाले, सब तरह के रूप धारण करने वाले, जटा-जूट रखने वाले, नीलकण्ठ, श्वेतग्रीव, तीक्ष्ण दांत वाले, तीन नेत्र वाले हैं जो जटाओं के मुकुट से शोभित हैं और दस भुजाओं वाले हैं उनके शरीर से पदम की तरह भीनी भीनी खुशबू आती है, वे दोपहरी के सूर्य के समान परम तेजस्वी होते हैं। वे सभी पीले रंग के वस्त्रों को धारण करते हैं वे सब धनुष बाण को हाथों में धारण करते हैं। वे सभी श्वेतवर्ण के रथपर सवार होकर घूमते रहते हैं। इन सबों के साथ भक्त हितकारी भगवान शंकरजी आनन्द प्राप्त करते हैं। भगवान के मुंह से सुनी इस त्रयम्बक की इस कथा को वायुदेव ने उन परम तपस्वी ऋषियों को सुनाया, तो वे बहुत प्रसन्न हुये।

ऋषियो ने कहा— हे देवदेव! हे वायुदेव! आपने हमको महादेवजी का महात्म्य विधिपूर्वक सुनाया, जो देवताओं को भी दुर्लभ है। अमृतरूपी आपकी इस पुण्यदायी कथा को सुनकर हम पवित्र हो गये।

इसके सुनने के बाद अब कुछ भी शेष नहीं रह गया है। हे श्रेष्ठ वायुदेव ! अब आप इसके बाद हमारे एक दूसरे प्रश्न का उत्तर दीजिये।

सूतजी बोले—

हे ऋषिगणो ! नैमिषारण्य के रहने वाले ऋषियों की इस प्रकार बात को सुन कर वायुदेव ने कहा कि हे तपस्वी ऋषियो ! अब आप मुझे बतलाइये कि मैं आपको क्या सुनाऊँ।

ऋषियों ने कहा— हे वायुदेव ! भगवान शंकर के इस पार्श्व भाग में स्थित रहने वाले आदित्य उनके क्रोधमय वे सिंहगण, वैश्वानरगण भूतगण, अनुगामी व्याघ्रवन्द ये सब प्राणविनाशक उस घोर प्रलय काल में किस स्थित को प्राप्त होते हैं। आप हमको इनके बारे में बतलाइये।

वायुदेव बोले— उन समस्त सिद्धि प्राप्त करने वाले शिवपुर निवासी में जो ब्रह्माजी के कुमारपुत्र सनक, सनन्दन, सनातन, सनत्कुमार, बोढु, कपिल, आसुरि और मुनिवरपञ्च शिख ऋषि हैं। इनके अलावा जो और ऋषिगण हैं, वे सब के सब आदि कारण भूत अव्यक्त, सत्ता की महत्ता को जानकर पूर्व ही परमगति को प्राप्त हो जाते हैं। इसके बाद बहुत समय बीत जाने के बाद कल्प के समाप्त होने पर महाप्रलय आ जाता है। बहुत से रुद्रगण सत्य का सहारा लेकर शब्दादि विषयों से विरक्त होकर अपने ज्ञानमय तेजोबल से सभी जीवधारियों में शरीर धारण करते हैं। वे सब महात्मागण परमाणु रूपधारी महेश्वर को प्राप्त करते हैं। और इसके बाद वहाँ पहुँच कर जन्ममरण रूप जल से पूर्ण भीषण लहरों युक्त भवनदी को पार कर जाते हैं। फिर वहाँ पर प्राप्त होकर वे सर्व व्यापी परब्रह्म का दर्शन करते हैं। वे अपनी सात महादेवियों के साथ वहाँ स्थित रहते हैं। सिंह, आदित्य, वश्वानरभूत, व्याघ्र और अनुगामी रुद्रगण इन सबको अपनी आत्मा में प्रविष्ट करके इन सातों लोकों को तथा पांच महाभूतों को भी भगवान शंकरजी अपने में प्रविष्ट कर लेते हैं। इस प्रकार भगवान विष्णु के साथ सृष्टि का पैदा करना तथा सृष्टि का नाश करना दोनों ही कार्य करते हैं, वे रुद्र हैं, वे ही साममय हैं,

वेही यजुर्मय हैं। हे ब्राह्मणो ! वे बाहर भीतर सभी स्थान से ओत प्रोत हैं वे ही एकमात्र ससार के चराचर हैं। उनका न आदि है न अन्त है। वायुदेव की इस प्रकार मीठी वाणी को सुनकर नैमिषारण्य के रहने वाले ऋषिगण अपने अपने निवास स्थान में जाकर मन वचन और कर्म से भगवान शङ्कर जी की उपासना करने लगे। वे सभी व्रत उपवास करने लगे, सभी प्राणियों पर दया करने लगे, उनके सभी भ्रम दूर हो गए। उन सबको अपनी परम भक्ति, ज्ञान और तपोवल से शाश्वत रुद्र लोक प्राप्त हुआ जिसकी रुद्र में भक्ति बढ़ती है, उसके सारे दुख दूर हो जाते हैं। जो जितेन्द्रिय होकर शूद्रभव में श्रद्धा रखते हैं और जो कभी शराब नहीं पीते हैं वह मनुष्य भी इस वर्णन के पाठ करने से रुद्र के लोक को प्राप्त होता है, वह चाहे वैश्य हो, चाहे ब्राह्मण हो, चाहे क्षत्रिय हो, चाहे शूद्र हो कोई भी जाति का मनुष्य हो उसके सभी दुख दूर होते हैं। जो मनष्य इसका पाठ करता है अथवा दूसरों को सुनाता है वह महाप्रलय तक परमायु प्राप्त करता है, तथा सभी मनोरथ पूर्ण करके गणेश जी के लोक को प्राप्त होता है। १०१

(इति श्री वायुमहापुराण का शिवपुर वर्णन नाम का एक सौ एक अध्याय समाप्त)

एक सौ दो अध्याय

(प्रतिसर्ग वर्णन)

सूत जी बोले—हे ऋषियो ! अब मैं इसके बाद पुरुषोत्तम भगवान स्वयम्भू के प्रत्याहार का वर्णन करूँगा। प्रजापति ब्रह्मा जी के स्थिति काल के समाप्त होने पर ईश्वर जिस प्रकार अपनी आत्मा में परम सूक्ष्म रूप में इस संसार को धारण कर लेते हैं मैं उसी का वर्णन करूँगा। उस प्रत्याहार में सभी अव्यक्त भूतों को व्यक्त ग्रस लेता है। कल्पों के नष्ट होने के समय को थोड़ा शेष रहने पर सृष्टि के इस प्रत्याहार का कार्य शुरू हो जाता है। सबसे अन्त में द्रुम नामक मनु के राज्य काल के समय पर कलियुग के नष्ट हो जाने पर यह घोर संकटकालीन समय आता है, उस समय यह सारी पृथ्वी अव्यक्त रूप में

बदल जाती है उसी को सृष्टि का संहार कहते हैं। उस संवर काल के समय जब सृष्टि का प्रत्याहार आता है, तो उस समय भूतों की तन्मात्राओं का भी विनाश होजाता है। सबसे पहले जल भूमि के गन्धगुण को खींच लेता है। जिससे पृथ्वी गन्ध रहित होकर जल में लीन हो जाती है और इस प्रकार जल में गन्ध तन्मात्रा के घुस जाने पर पृथ्वी जल रूप में बदल जाती है उसके बाद वह समस्त जलराशि संसार में फैलकर वेग से अति मुखरित होकर सब जगह पर फैल जाती है। इसके जल के रस का गुण तेज ज्योति में समाजाता है और इस प्रकार रस तन्मात्रा के नष्ट होजाने से जलराशि समाप्त होजाती है। तेज के द्वारा नष्ट हुआ रस ज्योतिमें बदल जाताहै और कहीं भी जल न दिखाई पड़ता है और सब तरफ तेज ही तेज दिखाई पड़ता है। सम्पूर्ण संसार में व्याप्त वह अग्नि समस्त जल अपने अन्दर सोख लेती है और उसकी लपटों में यह सम्पूर्ण संसार धीरे धीरे नष्ट होजाता है। चारों तरफ नीचे, ऊपर इधर उधर अग्नि की भयंकर लपटें ही दिखलाई पड़ती हैं, और फिर इस अग्नि की फैली हुई लपटों को वायु अपने में ग्रस लेती है। उस समय वायुमें वह तेज राशि दीपक की लौ की तरह लीन होजाती है। तन्मात्रा के नाश होजाने पर अग्नि का स्वरूप भी नष्ट होजाता है और जिससे अग्नि का तेज शान्त होजाता है। वायु से यह सारा संसार कम्पित हो उठता है, उस तेज के वायु रूप में बदल जाने पर समस्त लोक आलोक नष्ट हो जाते हैं। तब वायु अपने मूल उत्पत्ति स्थान का सहारा लेकर इधर उधर चारों दिशाओं को बार बार कम्पित करता है। इसके बाद वायु के स्पर्श गुण को आकाश अपने अन्दर ग्रस लेता है और फिर वायु का वेग शान्त होजाता है, उस समय सिर्फ अनावृत आकाश ही स्थिर रहता है, कोई भी रूप रस गन्ध स्पर्श और मूर्ति नहीं रहती है, अपने भयकर कोलाहल से गूंजता हुआ वह मण्डलाकार आकाश प्रकाशित होता है, उसका केवल शब्द ही रहता है, इस प्रकार केवल शब्द गुण से युक्त आकाश सभी भूतों और उनके आश्रित रहने वाली इन्द्रियों को ग्रस लेता है यह भूतादि तामस

के नाम से पुकारे जाते हैं। इस भूतादि तामस को भी बुद्धि रूपी महत्तत्व ग्रस लेता है। यह महत्तत्व ही संकल्प और अध्यवसायात्मक है तत्व परायण मनुष्य इसी को बुद्धि, मन, लिङ्ग, महान और अक्षर प्रभृति पर्यायवाची शब्दों से पुकारते हैं। इस प्रकार जब सभी भूत नष्ट हो जाते हैं, उनके गुणों में साम्यता आजाती है। सम्पूर्ण संसार तपोमय होजाता है, लोक के कारण भूत समूह आत्मा में स्थित होजाते हैं। सृष्टि भी निहित होकर प्रकृति में मिल जाती है। तब आदि अन्त किसी का भी कुछ ज्ञान नहीं होता, न कुछ दिखाई पड़ता है, न चिदाभास होता है, न भेदभाव का ज्ञान होता है, कारण स्वरूप भी नष्ट हो जाता है ऐसी दशा में किसीका कुछभी ज्ञान शेष नहीं रहता है। उस समय वे सब पदार्थ उस सदसदात्मक, शाश्वतपरम कारण में प्रतिष्ठित होते हैं। यह स्वात्मिका प्रवृत्ति कारण से अनिर्देश्य है सृष्टि से इन सातों उपादानों का इस प्रकार क्रमशः विलय कहते हैं।

प्रत्याहार काल में इसी प्रकार इन सातों प्राकृत पदार्थों का परस्पर अनुपवेश होता है। सातों द्वीप सातों लोक सभी समुद्र व पर्वत आदि सभी को जिन्होंने ढक रखा है वह समस्त ब्रह्मांड सबसे पहले जलराशि में विलीन होता है। इसके बाद वह जल ज्योति में विलीन होजाता है। इसके बाद वह तैजस आवरण वायु को ग्रस लेता है। वायु सम्बन्धी वह आवरण आकाश में लय होजाता है। आकाशीय आवरण को भूतादि तामस अहंकार तत्व ग्रसता है। भूतादि को बुद्धि रूपी महत्तत्व ग्रसता है। महत्तत्व को अव्यक्त ग्रसता है। इसके बाद महत्तत्व व अव्यक्त दोनों का एक रस व गुण सब प्रकार से समान हो जाता है। सृष्टि का यह विस्तार एवं संहार ब्रह्मनिष्ठ प्रकृतिसे होता है, सृष्टि के लिये वह प्रकृति सदैव इन विकारों को ग्रसा करती है एवं निर्माण किया करती है। समस्त कार्यों और कारणों को जानने वाले ईश्वर प्रेमी, ब्रह्मवेत्ता, महर्षि, सदाशिव एवं ज्ञानी लोग स्वयं आकृष्ट होजाते हैं और संहार के समय वियुक्त हो जाते हैं। अव्यक्त को ही क्षेत्र कहा है।

ब्रह्म को क्षेत्रा कहा जाता है। इनका सम्बन्ध (साधर्म्य और वैधर्म्य मूलक) सदा से ही है। हे ब्राह्मणो ! सभी सर्गों क्षेत्रज्ञों के विषय में यहीक्रम जानना चाहिये। जो इस क्षेत्र तत्व को जानता है वही ब्रह्म ज्ञानी कहा है। ब्रह्मा को विषय एवं क्षेत्र को अविषय जानना चाहिये। क्षेत्र क्षेत्राज्ञ द्वारा अधिष्ठित है। शरीर को अधिकता के कारण शरीरी भी अनेक कहे हैं। अतः ज्ञानी लोग पुरुष को अनेक मानते हैं। बहुत काल के बाद जब सबके भेद की प्रवृत्ति घट जाती है तब स्वायंभू की स्थितिवृत्ति भी समाप्त हो जाती है। उस समय सभी ब्रह्मलोक निवासी अपनी अपनी स्थितिवृत्ति में दोष देखकर वैरागी होते हैं। जिससे उनके आत्मा के अहंकार का नाश होता है। वे ब्रह्मलोक के निवासी अलग अलग क्षेत्र के ज्ञान को जानने से क्षेत्रज्ञ कहे जाते हैं। वे सभी प्रकृतिगत कारणों से परे हैं। और वे सबके अनेकत्व को देखने वाले हैं। चेतना, चेतनात्मक, शुद्ध, बुद्ध, चैतन्य, निरंजन, प्रकृति में निर्वाण पाने वाले तथा फिर लौटने वाले नहीं हैं। प्रकृति से निर्गुण और निरात्म होने के कारण वे मुक्त हो जाते हैं। स्वयम्भू का प्राकृत प्रतिसर्ग इसी प्रकार का कहा है। तत्वों का कारणों के साथ ऐसा ही संयम होता है जिस तत्वसंयम को 'आवर्तनशील कहा गया है।

सूतजी बोले— हे ऋषिवृन्दो ! धर्म, अधर्म, तप, ज्ञान, सत्य, झूँठ, ऊँच, नीच. सुख-दुख, प्रिय. अप्रिय ये सभी गुणमात्रात्मक कहे गये हैं। इन्द्रिय ज्ञान से परे जो शुभा शुभ कर्म हैं वे सब प्रकृति वश ही हैं। प्रकृति ही देहधारियों के स्वभाव की उत्पत्ति की जगह है। अव्यक्त प्रकृति में जन्तुओं के पुण्य पापादि कर्म समूह अन्यशरीर धारण करने प फिर संयुत हो जाते हैं। देहधारियों के धर्म अधर्म गुणमात्रक हैं। कायदशा में अपने अपने कारणों द्वारा देहधारी के स्वभाव में वृद्धि को प्राप्त होते हैं। सभी प्राणियों में राजसी. तामसी और सात्विकी तीन गुणमात्रिक प्रवृत्तियां होती हैं। ऊर्ध्वभाग देवात्मक एवं सत्व गुण सम्पन्न है। अधोभाग तमोगुणमय है। दोनों का मध्यवर्ती एवं प्रवर्तक भाग रजोगुणमय है। समस्त त्रिलोकी ने सब जीवों

में यही तीन भाव बदलते रहते हैं। ज्ञानी पुरुष को जीवन में समस्त जीवों के स्वभावों की आलोचना नहीं करनी चाहिए। मनुष्य अविद्या के कारण ही शुभ अशुभ तथा दोनों के बीच की गतियों को प्राप्त होते हैं। जन्तुगण तमोगुण की अधिकता के कारण तत्वज्ञान नहीं प्राप्त कर पाते हैं। तत्व को न जानने पर ही बन्धन में पड़े रहते हैं। प्रथम प्राकृत, दूसरा वैकारिक, तीसरा दक्षिणात्मक बन्धन कहा है इन तीनों से बँधकर जन्तुगण दुःख का अनुभव करते हैं। ये तीनों अज्ञान मूलक बँधन कहे गये हैं। अनित्य पदार्थों में नित्यता का दर्शन, दृश्य में सुख देखना दूसरे की वस्तु में अपनापन देखना, अपवित्र में पवित्रता देखना–जिसके मन में इस प्रकार के दोष रहते हैं, उनकी विपरीतिता के कारण ज्ञान में भी दोष होजाते हैं। राग द्वेष से पूर्ण रूपेण निवृत होजाना ही ज्ञान कहा गया है। ऐसे ज्ञान का अभाव तमोगुण का मूल है। शुभ अशुभ गुणों का प्रेरक रजोगुण है। शरीर कर्मों के कारण धारण करना पड़ता है। जिससे महादुख की प्राप्ति होती है। कान से, नेत्र से, नाक से, त्वचा से जीभ से पुनर्जन्म के कारण भूत कर्मों का जन्म होता है। अपने अपने किये गये कर्मों के फल से ही अज्ञ जीवों को इन्द्रियों द्वारा उपभोग्य विषयों की तृष्णा में फँस कर दुखों का अनुभव करना पड़ता है। बार बार वह उन्हीं विषयों में तेली बैल की भांति चक्कर काटते हैं। इसी कारण सभी अनर्थों के मूल भूत अज्ञान से बचने का प्रयोग करते हैं। अज्ञान को शत्रु समझकर ज्ञान की प्राप्ति का प्रयत्न करना चाहिए। ज्ञान द्वारा ही समस्त अज्ञानों से मुक्ति मिलती है। अज्ञान छोड़ देने पर सांसारिक विषय वासनाओं से विराग होता है। विराग से मन की शुद्धि होती है। मनकी शुद्धि से सात्विक भावनाओं का उदय होता है। जिसके द्वारा मुक्ति की प्राप्ति होती है।

इसके बाद राग के विषय में कहूंगा जो सभी प्राणियों को अज्ञान में डालता है। राग के द्वारा सभी प्राणी विषय वासना में पड़ते हैं। ऐसे अनुराग से प्रीति, ताप, एवं विषाद का जन्म होता है। इच्छित वस्तुओं की प्राप्ति न होने पर या बाधा पड़ने पर दुख होता है।

उससे रात दिन याद करने पर सुख मिलता है। यह सब विषयगत राग ही है। जो उसकी उत्पत्ति का कारण है। ब्रह्म से लेकर स्थावर जीव समूह तक सभी इस विषयगत अज्ञान मूलक राग के कारण ही जन्म धारण करते हैं। अतः अज्ञान से सदा बचना चाहिये। यह अज्ञान वर्णाश्रमधर्म विरोधी और सद् साहित्यों के विपरीत है। यह अज्ञान पथ अस्थिर एवं तिर्यक योनि में जन्म देने के कारण है। उस तिर्यक योनि में जन्म लेने से जो यातनायें अनुभव करनी पड़ती हैं। उससे भी अधिक कष्ट इस अज्ञान के कारण मिलता है। भूतादिकों की चार प्रकार की तामसी वृत्तियां बताईं जाती हैं। सात्विक भावनाओं के द्वारा चित्त को सत्व प्रधान माना गया है। सत्व और क्षेत्र का नाना प्रकार का ज्ञान ही वास्तविक ज्ञान कहा गया है। ज्ञान से ही योग की उत्पत्ति होती है। संसार में फँसे रहना बन्धन और उससे मुक्ति वास्तविक मुक्ति होती है। उस मुक्त अवस्था में जीव का किसी से भी कुछ सम्बन्ध नहीं रहता उसकी एक अचैतन्य अवस्था रहती है। वह केवल आत्मनिष्ठ रहता है। जीव की इस अवस्था को विरूप कहते हैं। मैंने यह आपको ज्ञान और मोक्ष का परिचय कराया।

तत्वदृष्टा लोग मोक्ष को तीन प्रकार का कहते हैं। उसमें पहली मोक्ष ज्ञान बल के द्वारा सांसारिक विषय वासना से वियोग होना कहा है। दूसरी मोक्ष राग द्वेष आदि का निर्मूल करना। जिससे लिङ्गभाव दशामें जीव को कैवल्य की प्राप्ति होती है। कैवल्य से निरंजनत्व और निरंजनत्व से परमशुद्धत्व की प्राप्ति होती है। उस मोक्ष अवस्था में जीव को किसी मार्ग दर्शक की आवश्यकता नहीं होती। तीसरी मोक्ष है तृष्णा का सब प्रकार से अभाव। तृष्णा का अभाव मोक्ष का मूल कारण है। अभिगत शब्दों में प्रतिघात जन्य दुःखानुभूति मुक्त आत्माओं को नहीं होती है। अब इसके उपरान्त दोष दर्शन के द्वारा वैराग्य का लक्षण कहता हूँ। पांच प्रकार के दिव्य एवं मानुष विषयादिकों में अनासक्ति एवं द्वेषाभाव का व्यवहार करना चाहिये क्योंकि इनमें दोषके दर्शन होते हैं। सन्ताप, प्रीति एवं विषादको वर्जित करना

चाहिये। इस प्रकार इन्हें छोड़ देने पर शरीरधारी सांसारिक पदार्थों में ममत्व रहित होता है। यह संसार अनित्य है, अमंगलकारी है, दुख-दायी है। ऐसा सोचकर कार्य एवं कारणों के विशुद्ध तत्व को जानकर ही विज्ञों को चित्तके कषायकी तरह परिपक्वहो जाने पर समस्त दोषों का दर्शन होता है। यह शरीरके समस्त दोषोंको रोकता है। प्राणोंके स्थानों का भेदन एवं मर्मस्थलों का छेदन करता है। और शीतलता से अधिक जगी हुई वायु ऊपर को उठती है। सभी प्राणियों में प्राण-स्थलों में यह वायु की दशा अन्त समय में होती है। संक्षेप में चेतना हीन तथा किये गये कर्मों के संकुचित हो जाने पर यह जीव स्वकृत कर्मों के साथ शरीर से अलग होजाता है। आठों अंग के प्राणों की वृत्तियां छूट जाती हैं। इस प्रकार शरीर छोड़ता हुआ जीवात्मा श्वास रहित दशा में होजाता है। और अन्तमें वह शरीर मृतक नाम से कहा जाता है। जैसे खद्योत जीवित इधर उधर चमकता रहता है। और मर जाने पर उसकी चमक भी नष्ट हो जाती है उसी प्रकार प्राणों और शरीर की दशा जाननी चाहिये। तृष्णा का विनाश तीसरी मोक्ष माना गया है। शब्दादिक पांचों दोषों से द्वेष, और न अतिसय आसक्ति रखना, प्रीति एवं सन्तान से अलग रहना, ही वैराग्य और प्रकृति के विलय के मुख्य कारण हैं। अव्यक्त से लेकर महाभूतों तक कही गई आठ प्रकृतियों को यथाक्रम जानना चाहिये। यही आठ प्रकृति के लय होते हैं। शास्त्रों का विरोध न करने वाले वर्णाश्रम व्यवस्था के अनुयायी लोग शिष्ट कहे जाते हैं। ब्रह्मा से लेकर पिशाचों तक आठ देवयोनियां कही गई हैं। अणिमा आदि ऐश्वर्य शालिनी सिद्धियां भी आठ होती हैं। वर्षाकाल में आकाश के मेघों में छिपा जल आदि दीखता नहीं परन्तु उसको अनुमान से ही जाना जा सकता है। उसी प्रकार सिद्ध लोग जीवात्मा को दिव्य नेत्रों से देखते हैं सामान्य लोग उसे नहीं देख सकते। यह जीवात्मा द्विजाति उच्चयोनियों से लेकर श्वानों को बांधने वाले चाण्डालों तक की योनियों में प्रवेश करता है। इस प्रकार ऊर्ध्व अधः, तिर्यक योनियों में वह जीव अपने कर्मवश दौड़ता है

चौदह प्रकार के ज्ञानों से परिवित होकर वह शुद्धात्मा प्रकृति का अनुवर्तन करता है। विद्वान लोग केवल प्रकृति को ही सत्य बताते हैं। उनकी दृष्टि से विकार मिथ्या हैं। जिनका कोई अस्तित्व नहीं है वह असत्य या मिथ्या है तथा जिनका सद्भाव है वे सत्य कहे गये हैं। क्षेत्रज्ञ नाम व रूप से रहित है किन्तु नाम व रूप की परम्परा उसी से चलती है। क्षेत्र के जानने के कारण क्षेत्रज्ञ मंगलदायी कहा गया है। इसी से जीव मंगलकारी क्षेत्रज्ञ का स्मरण करते हैं। क्षेत्र की भावना केवल क्षेत्रज्ञों द्वारा होती है। यह क्षेत्र प्रत्यय है। क्षेत्रज्ञ उसका प्रत्ययी है। क्षय, करण, क्षतत्राण, भोज्य और विषयत्व के कारण उस को क्षेत्र बतलाया गया है। महत् से लेकर सम्पूर्ण क्षर अक्षर पदार्थ निश्चय विकार कहे गये हैं। विकारों के कारण पुनः क्षरण होता देखा जाता है इससे इन्हें क्षर कहते हैं। संसार एवं नरकों से पुरुष की रक्षा करता है, दुखों से बारम्बार बचाता है। अतः उसे क्षेत्र कहते हैं। वह सुख दुख एवं मोह उत्पन्न करता है इसलिये उसे भोज्य नाम से भी कहा गया है। अचेतन विषय होने के कारण उसे विभु नाम से भी कहा जाता है। वे सब विकार समूह कभी क्षय नहीं होते अतः वह अक्षर नाम से प्रसिद्ध है।

पुर में सदा शयन करने के कारण पुरुष नाम पड़ा। वह पुरुष शुद्ध, निरंजन की तरह परम निर्मल, ज्ञान, एवं अज्ञान दोनों से विवर्जित, अस्ति तथा नास्ति इन विशेषणों से रहित हैं। उसके लिये बद्ध, मुक्त, गतिशील एवं स्थिति कोई भी विशेषण लागू नहीं होता। परम शुद्धता के कारण वह आनन्द स्वरूप कहा जाता है। परम हृष्ट होने के कारण समदर्शी कहा गया है। आत्म प्रत्यय कर्त्ता होने के कारण उसमें कोई हेतु बाद नहीं रहता। वह भावनाओं द्वारा ग्राह्य, अनुमानों एवं चिन्तनों द्वारा गम्य है इन उपायों द्वारा उसे देखने वाले मोह के वश नहीं होते इस दृश्य एवं अदृश्य विश्व प्रपंच में एक मात्र निर्देश्य परमश्रेष्ठ, ज्ञानमय, शान्तिमय सर्वज्ञपुरुष को जब प्राणी देखता है तभी वह समस्त तत्वों का ज्ञान प्राप्त करता है। उसे तभी सच्ची शान्ति

मिलती है। आत्मा द्वारा वह उस कारणात्मासे संयुक्त होता है प्रकृति एवं कारण में वह सर्वत्र अपनी ही आत्मा में उपासना करता है। इस लोक तथा परलोक में वह विद्यमान रहता है। और नहीं भी रहता। वह एक है या अनेक, क्षेत्रज्ञ है या पुरुष, आत्मवान है या निरात्मा, चेतन है या अचेतन, कर्त्ता है या अकर्त्ता, भोक्ता है या भोज्य इन्हीं किन्हीं विशेषणों से युक्त है। उस निरंजन को जानने के बाद संसार में जन्म नहीं होता।

उसकी कोई संज्ञा नहीं अतः वह अवाच्य है। उसका कोई हेतु नहीं इस कारण वह अग्राह्य है। व्यक्त और अव्यक्त सृष्टि का संहार, एवं विस्तार उसी परम पुरुष से होता है। वही क्षेत्रज्ञ इस संसार की सृष्टि करता है। प्रलय में वही उसे ग्रस लेता है। बुद्धि पूर्वक सृष्टि और लय उसी के द्वारा होती है। उसका आदि नहीं वह चिरकालीन है। सृष्टि के आदिमकाल से प्रलय तक उस परम पुरुष को प्रकृति ढके रहता है उस समय वह परम पुरुष अबुद्धि पूर्वक रचना करता है। उसे पुरुष का पुरुषार्थ ही मानना चाहिये। जगत के इस सृष्टि एवं लय को कोई ईश्वर कृत मानते हैं कोई प्रकृति कृत। परन्तु सृष्टि का यह व्यापार अनादि एवं अनन्त है। इस प्रकार यह प्रकृति जन्य सृष्टि का तीसरा कारण मैंने आपको सुनाया। इसमें निष्ठावान व्यक्ति मुक्ति लाभ करता है। इस प्रकार मैंने आप लोगों से तीन सर्गों की चर्चा की अब आगे आप लोग क्या सुनना चाहते हैं, वह बतलाइये।

इति श्री वायु महापुराण का प्रतिसर्ग वर्णन नाम का एक सौ दो वां अध्याय समाप्त ॥१०२॥

एक सौ तीन वां अध्याय

[सृष्टि वर्णन]

ऋषि बोले—हे सूतजी! आपने यह महान आख्यान हमें सुनाया। मनु के सहित समस्त प्रजाओं, ऋषियों समस्त देवताओं, पितरों, गन्धर्वों, भूतों, पिशचों उरगों राक्षसों दत्यों, दानवों यक्षों, गन्धर्वों पक्षियों आदि के कर्म, जन्म धर्म आदि की विचित्र कथायें

सुनाई जो मन एवं कानों को अत्यन्त सुख देने वाली हैं। हे सूतजी ! ये कथायें सचमुच मनुष्यों को महाप्रलय तक प्रसन्न रखने वाली हैं। इस प्रकार बड़े आदर पूर्वक उन ऋषियों ने सूतजी से कहकर सृष्टि के वर्णन की कथा को पूछा।

हे सूतजी ! जब क्षेत्रज्ञ समस्त बन्धनों से मुक्त होजाता है। प्रकृति के सम्पूर्ण तत्व, रजत, तामस ये तीनों गुण समान अवस्था वाले हो जाते हैं, जीव ब्रह्म के साथ अव्यक्त में लीन हो जाता है तब फिर से सृष्टि किस प्रकार होती है। इसे आप अच्छी प्रकार बतलाइये। ऋषियों के द्वारा इस प्रकार पूछे जाने पर लोमहर्षण सूतजी पुनः सृष्टि की व्याख्या करने लगे।

सूतजी बोले—हे ऋषियो ! संक्षेप से पुनः सृष्टि का क्रम आपसे कहता हूं। सो ध्यान से सुनो इस विषय में जितनी युक्ति और तर्क हैं उन्हें सभी को बताता हूं। जिस प्रकार अव्यक्त परोक्ष एवं दुरधिगम्य है उसी प्रकार सृष्टि भी है। जब विकार विलीन हो जाते हैं उस समय पुरुष प्रकृति में साधर्म्य से प्रवेश करता है। प्राणियों के अव्यक्त तथा व्यक्त सभी कर्म भी लीन होजाते हैं। सत्व में सत्वमात्रिक धर्म लीन होता है। तम में तमोमात्रिक गुण लीन होता है। गुण साम्य में ये दोनों धर्म विभाग रहित होजाते हैं। उस समय प्रधान के सभी कार्यों में प्रवृत्ति बुद्धि पूर्वक होती है। क्षेत्रज्ञ उस समय गुणों को अबुद्धि पूर्वक ग्रहण करेगा। साम्य अवस्था में वे गुण सृष्टि के आरम्भ के समय क्षेत्रज्ञ द्वारा अधिष्ठित होकर विषमता को प्राप्त होते हैं। तब क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ दोनों व्यक्त अवस्था को प्राप्त होते हैं। क्षेत्रज्ञ द्वारा अधिष्ठित सत्व विकारों को उत्पन्न करते हैं। वे विकार महत आदि चौबीस होते हैं। सभी युक्त आत्माओं का एक मात्र स्वामी, ब्रह्मा एवं ब्रह्ममय और महान है। आदि देव प्रधान प्रकृति के अनुग्रह के लिये उसका यह आविर्भाव कहा जाता है। वे क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ अनादि एक परम सूक्ष्म कहे जाते हैं। उन दोनों का अनादि कालीन संयोग है। मशक और उदम्बर (गूलर), जल व मछली के समान उनका सम्बन्ध नित्य है।

सत्य का व्रत रखने वाले ध्याननिष्ठ ब्रह्माजी की सृष्टि के आरम्भ काल के समय आपस में विधर्मी रजस सत्व, तमोगुण कार्य कारण वश व्यक्तावस्था को प्राप्त होते हैं। अभिमानी क्षेत्र और उसके जानने वाले क्षेत्रज्ञ आपस में व्यक्तभाव को प्राप्त होंगे। वे अपने गुणों के कारण ही विकार अवस्था को प्राप्त होते हैं। उनके पहले युग के गुण उनके पास स्वयं ही आते हैं, इसीलिए उनको वे अच्छे मालूम होते हैं। पूर्व सृष्टि में जो क्षेत्रज्ञों के गुण रहते हैं, उन्हीं गुणों को वे सृष्टि काल में भी पुनः प्राप्त करते हैं। हिंसा, अहिंसा मृदु, क्रूट, धर्म, अधर्म, सत्य असत्य, ये सभी गुण उनसे पूर्व सृष्टि के पास रहते हैं अतः इस कारण सृष्टि पर वे उन्हें प्राप्त होते हैं। इसी कारण वश उनको यह अच्छे मालूम देते हैं। महाभूत, इन्द्रियार्थ, मूर्त पदार्थ और प्राणिवृन्द की अनेकता, ये सब कार्य कलाप गणों की विचित्रता कारण ही होते हैं। मैंने आप को सूक्ष्म रूप में पुनर्वार सृष्टिका वर्णन सुनाया है, अब मैं आपको ब्रह्माजी की उत्पत्ति के विषय में बतलाऊँगा।

नित्य, सत, असत, उभयात्मक अव्यक्त, कारण स्वरूप प्रकृति पुरुष के संयोग के एक महान प्रतिभाशाली पुरुष पैदा होता है, उसी का नाम ब्रह्माजी होताहै वही समस्त सृष्टिके उत्पन्न पदार्थों को पैदा करतेहैं, वे सबके पिताहैं। वे अभिमान गुणात्मक सभी लोकों को पैदा करता है। उसी को महत्पद से विशिष्ट कहते हैं। उसी महत् से अहङ्कार का उत्पन्न होता है और उसी की आत्मा से भूतों की सृष्टि पैदा होती है। वे सभी भूतचय एक साथ ही उत्पन्न होते हैं। अतः वे ही इन्द्रियों के नाम से पुकारे जाते हैं। उन भूत समूह से अन्यान्य भूत भेदों की उत्पत्ति होती है। इस प्रकार सृष्टि का प्रवर्तन होता है। हे श्रेष्ठ ऋषियो! सृष्टि की यह कथा बहुत पवित्र और महान है। सूतजी ने कहा! जो और जैसा हमने सुना वैसा मैंने सब आपको बदलादिया है। इसके बाद सभी नैमिषारण्यवासी ऋषियों ने उसदीर्घ कालीनयज्ञ में स्नान किया और पुण्य लोकों को प्राप्त किया आप लोगभी देवताओं की पूजा इत्यादि करके दीर्घायु के भोगों को भोगकर पुण्यशाली लोकों को प्राप्त करोगे।

और वहां इच्छानुसार विहार करोगे। हे श्रेष्ठ ब्राह्मणो! नैमिषारण्य के ऋषियों के अनुसार तुम लोग भी अनेक यज्ञ करके स्वर्ग को प्राप्त करोगे। इस प्रकार प्रक्रिया अनुषंग, उपोद्घात और उपसंहार इन चार पादों से युक्त लोक सम्मत इस महापुराण को लोक कल्याण के लिये भगवान वायुदेव ने यज्ञ के प्रसंग में मुनियोंको सुनाया, इन्हीं की कृपासे इस लोक की प्रधान सृष्टि, भूतों की उत्पत्ति और विनाश की कथा को अच्छी तरह सुन कर बुद्धिमान पुरुष मोह में नहीं पड़ता है जो विद्वान पुरुष इस प्राचीन इतिहास को सुनता और सुनाता है अथवा अपने शिष्यों को सुनाता है वह अनन्त समय तक सुख भोगता है और ब्रह्मसाम्राज्य प्राप्त करके ब्रह्माजी के साथ मुक्ति प्राप्त करता है। इस समस्त भूमण्डल के अधीश्वर प्रजापतियों की गाथाओं का गान करने से ब्रह्मत्व की प्राप्ति होती है। कृष्णद्वैपायन वेदव्यास रचित इस महा-पुराण को ब्रह्मवेत्ता लोग ही जानते हैं, यह आयु प्रदान करने वाला पूर्ण प्रदाता, वेदों द्वारा सम्मानित है। जो मन्वन्तरों देवताओं और ऋषियों का गुणागान करता है वह पापों से मुक्ति पाकर महान पुण्य प्राप्त करता है। जो विद्वान पर्वों के अवसर पर इस पवित्र कथा को सदा सुनाया करते हैं। वे स्वर्ग का सुख प्राप्त करके ब्रह्मत्व को प्राप्त करके ब्रह्मत्व को प्राप्त होते हैं। इस पुराण के अन्तिम उपसंहार पाद को जो समस्त कामनाओं को पूर्ण करने वाला और अक्षय फल देने वाला है, श्राद्ध के अवसर पर सुनाते हैं, वे अपने पितरों को बहुत ही तृप्त करते हैं। पुरा, अर्थात् प्राचीनकाल में इसकी प्रतिष्ठा थी इस लिये इसको पुराण कहते हैं, जो मनुष्य इस पुराण के इस अर्थ को जानता है वह पाप कर्मों से मुक्त होता है। तीनों वर्णों में जो श्रेष्ठ इतिहास को सुनकर धर्म कार्य करता है और धर्म की ओर मन लगाता है वह अपने शरीर में स्थित रोम कूपों की संख्या के बराबर करोड़ों सहस्रों वर्ष तक स्वर्ग का आनन्द प्राप्त करता है। इस पुण्य प्रदान करने वाले सभी पापों को दूर करने वाले इस पुराण को ब्रह्माजी ने मार्कण्डेय को वायुदेव को प्रदान किया था। वायु से इसे शुक्राचार्य ने

प्राप्त किया, शुक्राचार्य से बृहस्पति को प्राप्त हुआ, बृहस्पति ने सवित्ता को और सविता ने मृत्यु को, मृत्यु ने इसकी शिक्षा इन्द्र को दी, इन्द्र ने वशिष्ठ को, वसिष्ठ ने सारस्वत को, सारस्वत ने त्रिधामा को, त्रिधामा ने शरद्वत को फिर शरद्वत ने त्रिविष्ठ को त्रिविष्ट ने अन्तरिक्ष को इसे प्रदान किया, अन्तरिक्ष ने वर्षों को, वर्षों ने त्रय्यारुण को त्रय्यारुण ने धनंजय को, धनंजय ने कृतञ्जय को, कृतञ्जय ने त्रणजंय को त्रणजंय ने भरद्वाज को, भरद्वाज ने गौतम को, गौतम ने निर्यन्तर को प्रदान किया। इसके बाद निर्यन्तर ने बाजश्रवा को, बाजश्रवा ने सोमसुष्मा को, सोमसुष्मा ने त्रणविन्दु को, उन्होंने दक्ष को, दक्ष ने शक्ति को, शक्ति से इस उपदेश को पराशर ने गर्भ में ही प्राप्त किया, पराशर से जातुकर्राय को और जातुकर्राय से भगवान द्वैपायन ने प्राप्त किया। हे ब्राह्मणो! उन्हीं द्वैपायन से इसका उपदेश मुझे मिला, और मैंने आप सबको सुनाया।

शांशपायनजी बोले—हे श्रेष्ठ ब्राह्मणो! मैंने भी इस कथा को व्यासजी से प्राप्त किया था, और इसको अपने पुत्र अमित बुद्धि को सुनाया था। इसके आदि गुरू ब्रह्माजी ही हैं। इस प्रकार यह पुण्य कथा आप लोगों को सुनाई। सर्व प्रथम गुरुजनों को प्रणाम करना चाहिए। धन, यश, आयु पुण्य देने वाले इस पवित्र वर्णन को ब्राह्मणों को सदानियम पूर्वक सुनाना चाहिये, तथा पवित्र और उत्तम कथा को भूलकर भी अपवित्र और अनजान मनुष्य को नहीं बतलाना चाहिये तथा जो एक वर्ष तक सेवा भाव से शिष्य रूप में न रहा हो, उसे भी नहीं सुनाना चाहिए। इसका उपदेश अश्रद्धालु, अपुत्री और अहित कारी मनुष्य को कभी भी उपदेश नहीं दे। जिसका उत्पत्ति स्थान अव्यक्त है जिसकी देह व्यक्ताव्यक्त काल है, जिसका मुख अग्नि है, चन्द्रमा और सूर्य जिसके नेत्र है, जिसके कान दिशायें हैं जिसकी नाक वायु है वेद जिसकी वाणी है, जिसका शरीर अन्तरिक्ष है पृथ्वी जिसके चरण हैं रोमावलियां जिसके तारे हैं सभी दिशायें जिसके अंग हैं, वेदों के अंग जिसकी पूँछ हैं। जो सब देवों के देव सबके पिताओं के भी पिता और

समस्त लोक में व्याप्त वरदायक महेश्वर ब्रह्मा को मैं सर्व प्रथम नमस्कार करता हूँ ॥ १०३ ॥

इति श्री वायु महापुराण का सृष्टि वर्णन नामका एक सौ तीन अध्याय समाप्त

एक सौ चार अध्याय

[व्यास की सन्देह-निवृति]

शौनकादि ऋषियों ने कहा—हे महामते सूतजी ! आप सत्य ही पाप रहित हैं, क्योंकि भगवान व्यासजी की कृपा से आप निखिल शास्त्रों के वर्णन को बतला चुके हैं। आपने अठारह पुराणों को इतिहास उपक्रम और उपसंहारादि सहित बतलाया है। आपने हमको बहुत स्पष्ट करके चौदह सहस्र श्लोकों में वर्णित इस मात्स्यपुराण को सुनाया है और उतनी ही संख्या वाले भविष्य महापुराण को भी आपने बतलाया है, भविष्य में मत्स्य की अपेक्षा पांच सौ श्लोक अधिक ही बतलाये जाते हैं। इसके बाद आपने पवित्र नौ हजार श्लोकों के मार्कण्डेय पुराण को भी सुनाया है। इसके बाद अठारह हजार ब्रह्मवैवर्त नामक पुराण को भी बतलाया है। बारह हजार एक सौ श्लोकों का ब्रह्माण्ड पुराण को भी हमें बताया, अठारह हजार श्लोकों का भागवत पुराण भी सुनाया, दस हजार श्लोकों का ब्रह्म पुराण को भी सुनाया है तथा दस हजार श्लोकों का बामन पुराणको भी सुनायाहै दस हजार छः सौ श्लोकों का आदि पुराण तथा तेइस हजार श्लोकों का वायुपुराण तेइस हजार श्लोकों का नारद पुराण, उन्नीस हजार श्लोकों का गरुड़ पुराण पचपन हजार श्लोकों का पाद्मपुराण को भी हमें बतलाया है। इसके बाद सत्रह हजार श्लोकों का कर्म पुराण, चौबीस हजार श्लोकों का बाराह पुराण, इक्यासी हजार श्लोकों का स्कन्द पुराण को भी हमने आप लोगों को बतलाया है। इस तरह परम विस्तृत अठारह पुराणों की गाथाका वर्णन आपने कियाहै। उन पुराणों में सभी धर्मों का निरूपण, रागी-वैरागी, यति, ब्रह्मचारी, गृहस्थ, स्त्री, शूद्र विशेषतया ब्राह्मणक्षत्रिय, वैश्य तथा अन्य वर्णसकर आदि के धर्मों का वर्णन है। गंगा आदि नदियों यज्ञों, व्रतों तपो जपों आदि के नियम उनमें वर्णित

हैं। उनमें अनेकों प्रकार के दान, यम, नियम, योग, सांख्य, भागवत धर्म भक्ति, ज्ञान, वैराग्य, अनिल, नीरज, अनेक प्रकार की उपासनाओं आदि का विधि सहित वर्णन किया है। ब्राह्य,शैव, सौर, शक्त, आर्हत छः दर्शन का उनमें विवेचन किया गया है इन सब बातों के अलावा हमारी यह इच्छा शेष रह जाती है कि इन बातों के अलावा और कोई बात शेष रह जाती है कि नहीं, भगवन वेदव्यास को या आपको ऐसी कोई बात नहीं जो ज्ञात न हो, आप सब पुराणों के जानकार हैं कृपा करके हमारे इस सन्देह को दूर कीजिए।

सूतजी बोले—हे शौनकजी ! इस दुर्लभ प्रश्न के उत्तर को सुनिये। ये बहुत ही गोपनीय है भगवान वेदव्यास ने सभी पुराणों की रचना करके अपने मन में सोचा कि इन पुराणों में मैंने वर्णाश्रम धर्म के मानने वाले लोगों के कर्तव्यों का वर्णन कर दिया है। वेदों के अनुसार अनेक मोक्ष देने वाले मार्गों का वर्णन कर चुका, ईश्वर और जीव के भेदों का वर्णन कर चुका हूं, वेद सम्मत; परब्रह्मी निर्णय कर चुका, वह परब्रह्म कभी नष्ट नहीं होता, तथा वह शुद्ध, अनादि, अनन्त, अनामय नित्य, सर्वगत, कूटस्थ स्थाणु है समस्त इन्द्रियों में विचरण करने वाले नित्य चिन्ह मात्रा, अव्यय, अतीन्दिय है। इस अखिल ब्रह्मांड में व्याप्त है। जिस प्रकार केन, तरङ्ग बुलबुले जलके ही विकार हैं। ये जल से अलग कुछ भी नहीं हैं। इसी प्रकार ब्रह्म समस्त विश्व विभूतियों से पृथक नहीं है। सब कुछ ब्रह्म ही है। जगत में अनेक कुछ नहीं है। यही वेदों का तात्पर्य है। इसी से समस्त ब्रह्मांडों की उत्पत्ति होती है। उसी में ये पुनः समाविष्ट हो जाते हैं। उसी के उन्मेष और निमेष से जगत का प्रलय एवं उदय होता है। उसी के आधारभूत वह पराशक्ति है जो समस्त जगत की सृष्टि स्थिति एवं विनाशकर्त्री है। उसी में यह समस्त जगत अवस्थित है। इसी से इसकी उत्पत्ति, पालन और लय होती है। उसे न जानने से जगत सत्ता का बोध होता है उसको जान लेने पर सब झूँठा जान पड़ता है। वह असत्य जड़, दुःख एवं अवस्तु निरूपति किया गया है।

इसके विपरीत वह पर ब्रह्म सत् चित् आनन्द एवं मूर्तमान है। वह जीवों की जागरण अवस्था में विश्व, स्वप्नावस्था में तेजस एवं सुषुप्ति में प्राण संज्ञक है, सभी अवस्थाओं में उसका अस्तित्व स्मरण किया जाता है। वह नेत्रों का भी नेत्र है। कानों का भी कान है। त्वचा का भी त्वचा है। रसना का भी रसना है। अधिक क्या कहा जाय वह प्राणों का भी प्राण है। मनुष्य अपनी बुद्धि ज्ञान, प्राण एवं क्रिया शक्ति इन सबके द्वारा निरन्तर ध्यान करते हुये भी उसको नहीं पा सकता है। रस्सी में सांप, बालू में जल, गगन में नीलिमा की तरह अविधा के कारण' यह असत्य जगत सत्य की भांति मालूम पड़ता है। जैसे आकाश घटाओं आदि से ढका होने पर घटाकाश कहलाता है उसी प्रकार यह परब्रह्म भी कार्यों की उपाधि से ढका होने पर जीवात्मा आदि नामों से कहा जाता है। विचित्र गुणों वाली तथा चित्रकारिणी माया के द्वारा ब्रह्माण्ड रूपी चित्र पर ब्रह्म को चित्रित कर रखा है। यह अक्षर परब्रह्म अन्यदौड़ने वालों को भी आक्रान्त करने वाला तथा मुक्ति युक्त वक्ता की वाणी से भी परे है। वेदएवं वेदान्तों के सिद्धान्तों द्वारा उसका निर्णय किया जाता है सुना जाता है। कि अपनी अव्यक्तमें आत्मा रूप से स्थित, परमानन्द स्वरूप आनन्द विग्रह लीला विकास रूप में गोपियों के समूह में विचरण करने वाले, रत्नों से चमकीले मोर पंख के बने. मनोहर मुकुट को धारण करने वाले चमकती हुई बिजली के समान रेखाओं के तुल्य चमचमाते हुये कुण्डल धारण करने वाले कानों तक लम्बे सुन्दर खंजन के समान चंचल नेत्र वाले कुंजों में गोपिकाओं के साथ इतिक्रीड़ा करने वाले पीताम्बर धारण करने वाले चन्दन अंगरागादि से सुन्दर, अधरामृत द्वारा संसिक्त वेणु का नाद सुनाकर गोपियों को मोहित करने वाले, चित स्वरूप, रत्नपूर्ण गुजाओं और मृगों के द्वारा घिरे हुये पवित्र यमुना तट पर तमाल के रमणीय वनों में कदम्ब चम्पक अशोक और पारिजात के वृक्षों से मनोहर, मोर, कबूतर, शुक, पिक, आदि पक्षियों के कोलाहल से पूर्ण, वनप्रान्तों में गौओं के रक्षार्थ इधर उधर दौड़ते हुये, श्रीराधा के

विलास के प्रेमी, श्री कृष्ण ही वह परम पुरुष हैं। वेदों में भी यही कहा है उन्हीं से यह ब्रह्मान्ड प्रकाशमान है। वह परम पुरुष श्रीकृष्ण भगवान, चिन्मात्र निर्गुण भेद रहित गोलोक में विहार करते हैं। उनसे परे कोई वस्तु इस विशाल ब्रह्मांड में नहीं है। निगम आगम इसे प्रमाणित करते हैं। निगम के कहने पर वह परब्रह्म अक्षर से भी परे है। अक्षर से परे कौन हैं ऐसा श्रुतियां निरन्तर कहती हैं। श्रुति के वचनानुसार सत्यवती सुत भगवान वेदव्यास ने चिरकाल तक ध्यान किया परन्तु उसके तत्व चिन्तन तक नहीं पहुँचे।

सूतजी बोले—हे ऋषियो! बहुत समय तक विचार मग्न व्यासजी वेदार्थ निश्चय में समर्थ नहीं हुये वेद साक्षात् नारायण का रूप है। बड़े बड़े विद्वानभी मोह को प्राप्त होते हैं। इसके बाद व्यासजी इस हृदय को आनन्द देने वाली चिन्ता में पड़े रहे। और बार बार यही सोचते रहे कि कहां जाऊँ क्या करूँ? कोई सर्वज्ञ द्रष्टा नहीं है जिसके पास जाकर अपना सन्देह दूर कर सकूँ। ऐसा विचार कर वे सुमेरु पर्वत की एक अन्धकारमय गुफा में जाकर तपस्या करने लगे। गुफा में आंखों को भी कष्ट कारक घोर अन्धकार था। वहां एक परम रमणीय जंगल भी था। जिसमें अनेक प्रकार के वृक्ष और लताओं के कुँज बने हुए थे। वहां पक्षी गण निरन्तर कलरव करते हैं। उस मनोहर वनप्रदेश में प्राणी क्षुधा, पिपासा, भय, क्रोध, सन्ताप, ग्लानि आदि मानसिक कष्टों से मुक्त होजाता है। कमामनियों के सुशोभित अनेक जलाशय वहां पर थे। उन जलाशयों के किनारे पर स्वर्ण जटित शिलाओं पर विचरण करने वाले पक्षियों की परछाईयां दिखाई पड़ती थीं। कमलवनों में विचरण करने वाला वायु वातावरण को अत्यन्त शुद्ध कर रहे थे हिंसक जन्तु भी अपनी हिंसा के भावों को छोड़कर वहां बैर रहित उपकारी कार्यों से जीवन बिता रहे थे। चारों ओर शान्त निर्जन वातावरण था। ऐसे परम रमणीय वनप्रान्त में अत्यन्त सुन्दर गुफा में प्रवेश करके व्यासजी आहार चित्त एवं आसन पर अधिकार प्राप्त करके एकाग्र मन से चारों वेदों का ध्यान करने लगे। इस प्रकार उनको तीन

सौ वर्ष बीत गये। तब वहीं वेदव्यास जी को चारों वेदों के दर्शन हुये। वेद भगवान के मनोहर कमल के समान नेत्र थे। उनके शिरोभाग जटा मुकुट से अलंकृत थे। उनके हाथों में कुशा के स्तवक तथा कमल शोभायमान थे। मृगचर्म ओढ़ने पर अपूर्व शोभा सम्पन्न लग रहे थे। सोलह स्वरों तथा बीच बीच में प्रणवर (ॐ) के उच्चारण करने से उन के मुख की शोभा अधिक लग रही थी। कवर्ग तथा चवर्ग के सभी वर्णों के द्वारा उनके हाथों की पांचों उँगलियों समेत दोनों हाथ परम शोभायमान थे। पवर्ग उनके दाहिने चरण में तथा तवर्ग उनके बाँये चरण की शोभा कर रहे थे। उनके कुक्षि में अन्त के सभी वर्ण विराजमान थे। नवर्ण नाभि प्रदेश में क वर्ग पृष्ठ प्रदेश में, म उदर प्रदेश में तथा य र ल व केशपाशों के शोभा दायक थे। अग्नि बीज दक्षिण स्कन्ध पृथ्वी बीज ग्रीवा प्रदेश तथा भूत बाम स्कन्धमें विराजमान थे। सभी अन्तस्थ वर्ण (य र ल व) उनकी सन्धियों में शोभायमान थे। वेदव्यास ने उन वेदों के हृदय कमल प्रदेश में स्थित मथुरा पुरी का दर्शन किया क्योंकि वह पुरी स्वय भगवान को उत्पत्ति की स्थली है। उनकी भौहों के मध्य में काशी को देखा आधार स्थल में माया पुरी को देखा। लिङ्ग प्रदेश में काँची, नाभि मण्डल में अवन्ती, क प्रदेश में द्वारका एवं प्राणोंमें प्रयाग को स्थित देखा। उन वेदोंके दाहिनी तथा बांई ओर गंगा जमुना को बहते हुये देखा। मध्य में साक्षात् सरस्वती की धारा थी. मुख प्रदेश में गया क्षेत्र था दाढ़ी और कण्ठ के बीच में प्रभास क्षेत्र था। व्यास जी ने उनके ब्रह्मरन्ध्र में बदरिकाश्रम के दर्शन किये। दोनों नेत्रों में पौण्ड्रवर्धन और नैपाल को देखा तथा ललाट में पूर्णगिरि नामक पीठ के दर्शन किये। कण्ठ में मथुरा पीठ, कटि में कांची पीठ, स्तनों में जालन्धर पीठ का व्यासदेव ने दर्शन किया। कानों में भृगुपीठ नासिकापुर में अयोध्या, ब्रह्मरन्ध्र में ब्राह्मतीर्थ तथा सीमन्त में शैवतीर्थों के दर्शन किये। जीभ के अग्रभाग में शाक्ततीर्थ, हृदय कमल में वैष्णवतीर्थों का निवास था। चक्षु प्रदेशों में सौर और छायामें बौद्धतीर्थों को भी देखा। कण्ठ देशमें सौत्रामणि यज्ञ और उन प्रदेशों में पशुबन्धन देखा दक्षिण कटि प्रदेशमें वाजपेय

तथा मुख प्रदेशमें अग्निहोत्रका दर्शन किया। इसी प्रकार वाम कटिप्रदेश में अश्वमेध, उदरमें नरमेध, शिरोदेशमें राजसूय तथा अधरमें आवसथ्य का दर्शन किया। वेदों के ऊपरके होठों में दक्षिणाग्नि को मुखमध्य में गार्हपत्य अग्निको श्रुतियों में हवनकी अग्निको तथा रोम कूपों में सभी मन्त्र समूहों को देखा। समस्त पुराण वेदभगवानका पूजन कर रहे थे। संहितायें उनकी अलग-अलग उपासना कर रहीं थीं कर्म, उपासना एवं ज्ञान इन तीनों अंगों से उन वेद भगवानकी पूजाकी जारही थी। वे वेद भगवान भक्तों पर अनुग्रह करने वाले हैं। ऐसे वेदों के दर्शन करके व्यासजी परम विस्मित हुये। वेद कोटि सूर्यके भान प्रकाशमान तथा कोटि चन्द्रमाके समान सुन्दर प्रकाशमान लगरहे थे। मुनिवर वेदव्यास उनके चरणों में गिर पड़े और बोले आजमैं कृतार्थ होगया, मेराज न्मसफल हो गया, मेरा मन मेरी आयु फलवती होगई। जो हे भगवन्! आपके आज दर्शन प्राप्त हुये। आपसे इस जगतके लौकिक और अलौकिक जो भी पदार्थहैं वे सब आपको ज्ञात हैं। भूत भविष्य सभी वस्तु आपको ज्ञात हैं। आप केवल प्रकृति मार्गके उपदेष्टा नहीं हो। आप रागासक्त प्राणियोंकी स्वेच्छा चारिताका विधान बनातेहो। आपके वचनइस जगत को मिथ्या और ब्रह्मके प्रतिपादन करने वालेहैं। आप लोक कल्याणके लिये परमार्थका निरूपण करतेहो। आपके शब्द ब्रह्मके द्वारा अधिकारियोंने भेद बनाकर कर्म एवं ज्ञानके उपदेशों द्वारा समस्त जगत की रक्षाकी है। आपमेरे ऊपर कृपा करतेहैं अतः मैं कुछ पूछना चाहता हूँ। कामना वाले मनुष्यों के सतकर्मोंके फलसे स्वर्ग प्राप्त होताहै। ईश्वरके चिन्तनमें मन लगाने वालों के कर्मोंके फल चित्तशुद्धिहै। चित्तशुद्धि से ही ज्ञानकी प्राप्ति होतीहै। ज्ञानसे ही मोक्ष प्राप्ति होतीहै। मोक्ष ही ब्रह्मके साथ एकता कहो है। वह सत् चित् एवं आनन्द रूप है। उसके बाद सभी कृत और अकृत समाप्त हो जाताहै। फिर उसका फल नहीं भोगना पड़ता। इसका निर्णय भली प्रकार आप लोगों ने ही किया है। मेरे हृदय में सन्देह है कि उस ब्रह्म से बढ़ कर कोई सत्ता है यानहीं व्यासजी के ऐसे वचन सुनकर वेद भगवान 'बहुत अच्छा' कह कर बोले

वेद भगवान ने कहा—हे परम बुद्धिमान व्यासजी आपको धन्यवाद है। आप साक्षात् विष्णु के स्वरूप ही हैं। आप शरीर धारियों की आत्मा हैं। आप अजन्मा है फिर भी लोक कल्याण को जन्म लेते हो। आपको संसार के बन्धनों का कोई भय नहीं है। भगवती माया से आप अपने ज्ञान के कारण छुये नहीं गये हो अपनी इच्छा से शरीर धारण करते हो तथा अपनी इच्छा से ही तिरोहित होते हो। आपने हमारे मतों का ही प्रतिपादन किया है। पुराणों, इतिहासों एवं सूत्रोंमें आपने अनेक प्रकार से हमारे ही सिद्धान्तों का वर्णन किया है। वह पर, अक्षर, ब्रह्म सभी कारणों का कारण है। उससे अलग और परे कुछ भी नहीं है। पुष्प के रस एवं गन्ध की भांति वह आत्मा का भी आत्मा है। उसी को परम समझना चाहिए। हम लोग जो शब्द स्वरूप है उस परब्रह्म की महिमा को नहीं समझ पाते क्योंकि वह अक्षर ब्रह्म शब्दों के द्वारा वर्णन नहीं किया जा सकता है।

इति श्री वायु पुराण का व्यास सन्देह निवृत्ति नामक एक सौ चार वां अध्याय समाप्त हुआ ॥१०४॥

एक सौ पांचवां अध्याय

[गया माहात्म्य]

वायु बोले—हे ऋषिगणो ! इस कथा को कहने के बाद अब मैं सर्वोत्तम गया के माहात्म्य को कहूंगा। जिससे प्राणी सब पापों से छूट जाते हैं।

सूतजी बोले—हे ऋषियो ! एक बार महाभाग्यवान सनक आदि देवर्षियों के साथ नारद जी ने सनत्कुमार को प्रणाम करके पूछा—

नारद जी बोले—हे सनत्कुमार जी ! आप हमें उत्तम से भी उत्तम किसी तीर्थ का माहात्म्य बतलाने की कृपा करिये जिसके पढ़ने सुनने से सभी प्राणी तर जाते हैं।

सनत्कुमार जी बोले—हे नारदजी ! हम आपकी प्रार्थना पर तीर्थों में श्रेष्ठ गयाके माहात्म्य को बतला रहे हैं। जो श्राद्ध आदि पैत्रिक कार्यों में तारने वाला है। गया तीर्थ सब तीर्थों में, सब देशों सबसे श्रेष्ठ है

निर्भय पूर्वक यज्ञ के समाप्त हो जाने पर ब्रह्माजी ने ब्राह्मणों को दक्षिणा में गृह इत्यादि प्रदान किये। श्वेत बाराह कल्प में उसी पवित्र स्थान पर गयासुर ने यज्ञ का अनुष्ठान किया तभी से यह परम पुनीत क्षेत्र गया के नाम से प्रसिद्ध है इस तीर्थ को ब्रह्माजी बहुत अधिक चाहते हैं। नरक से डरने वाले पितरगण भी इस पुण्यशाली तीर्थ की बहुत इच्छा करते हैं। वे पितरगण कहते हैं कि जो पुत्र गया की तीर्थयात्रा करेगा, वह हम सबका दुःख संसार से त्याग देगा। इस पुराण तीर्थ में पुत्र को गया देखकर पितरगण अपने घर में खुशियां मानते हैं, वे इस प्रकार कहते हैं कि इस पुनीत तीर्थ में अपने पैरों से भी जल के छूने पर पुत्रगण हमें सब कुछ दे देंगे। वे कहते हैं कि यदि हमारा एक पुत्र भी गया यात्रा कर आयेगा तो अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त करेगा। यदि एक पुत्र भी नीले बृषभ का दान करेगा, तो हम सब का उद्धार करेगा। इस गया तीर्थ में जाकर जो पुत्र अन्न का दान करता है। पितरगण उसी सुपात्र पुत्र से अपने को पुत्रवान् समझते हैं। गया में तीन पक्ष तक निवास करने वाला पुत्र अपने सात पीढ़ी पितरों का उद्धार करते हैं। यदि तीन पक्ष तक न रह सके तो पन्द्रह दिन या सात दिन के निवास करने का भी बहुत फल होता है। महाकल्प काल से भी इकट्ठे किये हुए पाप कर्मों का भी गया तीर्थ यात्रा करने नाश होजाता है। वहां पर पितरों के उद्देश्य से पिण्डदान करना चाहिये, अपने लिए भी तिल के बिना पिण्डदान करने का विधान बतलाया है। ब्रह्महत्या, मदिरापान, चोरी, गुरुजनों की स्त्री के साथ समागम करना ऐसे कठोर महान पाप और पापियों के सत्संग होने वाले अन्य पाप कर्म भी गया श्राद्ध करने से नष्ट होजाते हैं। अपना औरस पुत्र हो अथवा किसी दूसरे का पुत्र हो, जब गया तीर्थ की पवित्र भूमि पर जिसके नाम से पिंडदान करता है, उसको वह पिंड शाश्वत ब्रह्म पर को प्राप्त करता है। इस गया तीर्थ में नाम और गोत्र का उच्चारण करके पिंडदान करता है, वह चाहे जिस किसी का जिस किसी के निमित्त से दिया हो वह मनुष्य परमगति को प्राप्त करता है।

ब्रह्मज्ञान, गयाश्राद्ध, गौशाला में मृत्यु प्राप्त करना, और कुरुक्षेत्र में रहने से मनुष्यों को मोक्ष को प्राप्त होता है।

इन सबों से ब्रह्मज्ञान, गौशाला में मृत्यु प्राप्त करना तथा कुरुक्षेत्र में रहने का भी इतना फल नहीं मिलता है जितना कि गया तीर्थ में सुपात्र पुत्र यात्रा करता है अथवा उस तीर्थ में मनुष्य पिण्डदान करने के फल को प्राप्त करता है। लेकिन मनुष्य को अधिकमास में, जन्म दिन के समय गुरु और शुक्र के अस्तकाल के समय तथा बृहस्पति के सिंह राशि में स्थित होने के समय गयो श्राद्ध को न छोड़ना चाहिए। चन्द्रमा और सूर्य ग्रहण के समय पर मृतक मनुष्य के लिये पिण्डदान देने से अक्षय फल प्राप्त होता है। इस पुण्य तीथ में जाकर क्षत को दोष नहीं लगता है। दुर्भाग्यवश किसी महान व्रण के हो जाने पर भी मनुष्य को गया तीर्थ में श्राद्ध कर्म करने से कोई पाप नहीं लगता है, और वह श्राद्ध कर्म करके ब्रह्मलोक को प्राप्त होता है। यदि मनुष्य जीवन में एक बार भी गया की यात्रा करले, और गया तीर्थ में पितरों को एक बार भी पिण्डदान दे देवे, तो उसके लिए संसार में कोई पदार्थ दुर्लभ नहीं है अतः उसको स्वयं ही सब सिद्धियां प्राप्त होजाती हैं ब्रह्मादि देवताओं के इस पुण्य परम प्रिय गया तीर्थ में कोई अचानक मृत्यु को प्राप्त होता है, तो वह निःसन्देह ही मोक्ष को प्राप्त होता है। मगध देशों में मरने वाले पितरों को तारने के लिए विद्वान पुरुष को गया श्राद्ध करना चाहिये।

ब्राह्मणों को उस समय हव्य कव्यादि से सन्तुष्ट कराना चाहिए क्योंकि उनके सन्तुष्ट होने पर ही सभी देवगण तथा पितरगण सन्तुष्ट होते हैं। विशाला, विरजा और गया को छोड़ कर सभी तीर्थों में पिण्डदान करने के लिये मुण्डन कराना चाहिए, गया में पिण्डदान करने वाले मनुष्य को केवल दण्ड धारण करना चाहिये. पिण्डदान नहीं करना चाहिये। विष्णुपद पर दण्ड रखकर वह अपने पितरों सहित मोक्ष प्राप्त करता है क्योंकि गया में पिन्डदान करने वाला

परमार्थिक दृष्टि से दण्डधारी पाप अथवा पुण्य का भागी नहीं होता है अतः सभी क्रियाओं को त्याग करके भाव प्रवण होकर एक मात्र भगवान विष्णु का ध्यान करना चाहिये। सन्यासी को सभी कर्मों को त्याग देना चाहिये, पर केवल वेद को नहीं त्यागना चाहिये। गयातीर्थ में जाकर उसे तीर्थ पूर्व, पश्चिम, दक्षिण, उत्तर दिशा में मुण्डन कराना चाहिये। ब्रह्माजी ने इस गयातीर्थ का विस्तार ढाई कोस का और गया क्षेत्र को पाँच कोस का तथा गया शिर का एक कोस का बताया है। संसार में जितने भी तीर्थ हैं वे सब तीर्थ इसी के अन्दर बसे हुये हैं। जो मनुष्य इस पुण्य गया क्षेत्र में श्राद्ध करता है, वह अपने पितरों के ऋण से मुक्त हो जाता है।

जो मनुष्य गयाशिर में श्राद्ध करता है वह अपने पूर्व सौ वंशों का उद्धार करता है। घर से गया तीर्थ यात्रा का प्रस्थान करने पर पितरों को पद पद पर स्वर्गारोहण की सीढ़ियां मिलने लगती हैं। श्राद्ध में दुग्ध मिश्रित खीर, सत्तू, पेठा, चावल, विविध प्रकार के पदार्थ फल, मूल को गया में दान करने का महान फल होता है। तिल, कल्क घृतसहित गुड़ खांड़ या सिर्फ दही, द्वारा गया में श्राद करने से पितरों को अक्षय तृप्ति प्राप्त होती है। जिस ऋतु में श्राद्ध हो उसी ऋतु के होने वाले भोज्य पदार्थ मुनियों द्वारा उद्दिष्ट हविष्यान्न और रसयुक्त मीठी वस्तुओं को एक ओर रख कर भगवान विष्णु के चरणारविन्दु में और फल्गु के पवित्र जल को धोकर पितरों के पिण्डदान करना चाहिये। पिण्ड के लिये आसन पिण्डदान दक्षिणा और अन्य संकल्प का तीर्थ श्राद्धों में इसी प्रकार का नियम है। विद्वान पुरुषों को विधि पूर्वक गया तीर्थ में श्राद्ध करना चाहिये। फल की कामना से तीर्थों में श्राद्ध करने वाले पुरुषों को काम, क्रोध और लोभ को छोड़ कर सारी क्रियायें करनी चाहिये। ब्रह्मचर्य व्रत रख कर एक समय भोजन करना चाहिये पृथ्वी पर सोना चाहिये, मन, वचन, काय से मनुष्य को

सदा सत्य वचन बोलना चाहिए, जो मनुष्य इन सब बातों का नियम पूर्वक पालन करता है। वही मनुष्य तीर्थ के वास्तविक फल को प्राप्त करता है। धीर पुरुष को तीर्थ की यात्रा करते समय पाषण्ड को छोड़ देना चाहिए। जो कामनाओं को उत्तेजित करता है, वह पाषण्ड है। जो मनुष्य धीरचित्त होकर पितरों में भक्ति और निष्ठा रखता है वह ब्रह्म वेत्ताओं की तरह अनन्यचित्त होकर सब कर्म करते हैं, वे ब्रह्मज्ञानी पुरुष ब्रह्मपद में स्थित होते हैं, वैतरणी नाम की नदी गयातीर्थ में पितरों को तारती है उस वैतरणी नदी में स्नान कर गोदान करने वाला अपने इक्कीस कुलों का उद्धार करता है। अक्षयवट के पास जाकर जो ब्रह्मपरायण ब्राह्मणों हव्य कव्यादि वस्तुओं से जो मनुष्य पितरों की पूजा करता है वह अक्षय फल को प्राप्त होता है, क्योंकि उनके सन्तुष्ट होने पर देवता और पितरगण सन्तुष्ट होजाते हैं। उस पवित्र गयातीर्थ में कोई ऐसा स्थान नहीं है, जहां कोई तीर्थ स्थित न हो, वहां सभी तीर्थों का मेल होता है, गया तीर्थ उन सबसे बढ़कर पुन्यदायी तीर्थ है। तीनों लोकों में गया का पिंडदान करना परम दुर्लभ माना जाता है। जब चन्द्रमा और सूर्य मकर राशि पर स्थित हो, उस समय तीनों में गया श्राद्ध परम दुर्लभ माना गया है। जो मनुष्य गया तीर्थ में श्राद्ध करता है उनको अक्षय फल प्राप्त है अतः गया तीर्थ में श्राद्ध करने से अक्षय फल प्राप्त होता है। मैं सैकड़ों कोटि कल्पों में भी गया तीर्थ का वर्णन नहीं कर सकता हूँ ॥१०५॥

[इति श्री वायु महापुराण का गया माहात्म्य नाम का एक सौ पांचवां अध्याय समाप्त]

—:❀:—

एक सौ छठवां अध्याय

गया माहात्म्य

नारदजी बोले—हे ब्रह्मन्! यह गयासुर किस प्रकार पैदा हुआ, उसका स्वरूप और उसका प्रभाव क्या है। उसने किस प्रकार तपस्या की, किस प्रकार शारीरिक पवित्रता प्राप्त की।

सनत्कुमार बोले–हे नारदजी ! भगवान विष्णु नाभि से लोक पितामह ब्रह्माजी पैदा हुए थे, और पूर्व काल में भगवान के कहने पर उन्होंने प्रजाओं की सृष्टि की। उन्होंने आसुरभाव से असुरोंको उत्पन्न किया, और उदार भावों से देवताओं को पैदा किया। उन असुरों में महा बलवान और पराक्रमी गयासुर पैदा हुआ। उस असुर की ऊँचाई सवा सौ योजन की थी, उसकी मोटाई साठ हजार योजन की थी, वह भगवान विष्णु का परम भक्त था। उसने कोलाहल नाम के सुन्दर पर्वत पर कठोर तपस्या की, और वहां पर वह अनेक हजार वर्षों तक श्वांस को रोककर स्थित रहा, उसके इस कठिन तप को देखकर देवता बहुत दुखी हुए। अतः सभी देवता मिलकर प्रजापति ब्रह्माजी के पास गये और बोले हे देव ! आप हम लोगों को गयासुर से बचाइये। देवों की इस दुखभरी वाणी को सुनकर ब्रह्माजो ने उनसे कहा हे देव–इस कार्य के लिए हम तुम सब मिलकर शङ्करजी के पास चलें, ऐसा विचार करके ब्रह्मादि देवगण श्री भगवान शङ्करजी के पास कैलाश पर्वत पर आये। और वे सब शङ्करजीसे कहनेलगे हेभगवान आप हमको गयासुर से बचाइये। शङ्करजी ने उन सबकी बात को सुन कर कहा कि हम सब विष्णु भगवान के पास चलें वे ही हमारा सबका कल्याण करेंगे। इस प्रकार विचार करके ब्रह्माजी, महादेवजी और सभी देवों ने जाकर क्षीर सागर में भगवान विष्णु को प्रणाम किया और कहा हे देव ! हम सब आपकी स्तुति करते हैं।

देवताओं ने कहा— हे भगवान ! जो सभी जीवों को उत्पन्न करने वाले हैं और उनके पालन हार हैं परम शोभाशली और विजयी हैं राक्षसों को ग्रसने वाले हैं अखिल समस्त संसार के धारण करने वाले हैं और योगियों के उद्धार करने वाले हैं वे अनन्त महिमा शाली हैं उन भगवान विष्णु जी को हम प्रणाम करते हैं।

सनत्कुमार बोले— हे नारद जी ! ब्रह्माजो और देवताओं द्वारा इस प्रकार स्तुति करने पर भगवान वासुदेव जी ने उनको दर्शन दिया और उनसे कहा कि हे देवगण ! आप सब यहाँ पर किस कारण वश

आये हो। भगवान के इस प्रकार पूछने पर देवों ने कहा कि हे देव ! आप हमारी गयासुर से रक्षा कीजिये। भगवान ने देवों से कहा कि हे ब्रह्मादि देवगण आप लोग जाइये, मैं भी उस दैत्य गयासुर के पास जा रहा हूँ। इस प्रकार कहकर भगवान विष्णु गरुड़ पर सवार होकर वरदान देने की इच्छा से गयासुर के पास आये और अन्य देवगण भी अपने अपने विमानों पर चढ़ कर उसी स्थान पर आये। भगवान वासुदेव और सभी देवों ने गयासुर से कहा, हे गयासुर ! तुम किस लिये इतना घोर तप कर रहे हो, तुम्हारी इस घोर तपस्या से हम सब सन्तुष्ट हुये हैं और तुम को वरदान देने के लिये यहां आये हैं। अतः तुम अपने मनोनुकुल वर प्राप्त करो।

गयासुर बोले— ब्रह्माजी, विष्णु महेश्वर इत्यादि सभी देवगण यदि सत्य ही मुझ पर सन्तुष्ट हुए हैं तो मुझे यह वर दीजिये कि मैं सभी देवों, तीर्थों यज्ञों, पर्वतीय प्रान्तों से भी पवित्र हो जाऊँ, मुझ को मनुष्य सभी देवताओं से भी पवित्र समझें। धर्म में रत रहने वाले ऋषि और अविनाशी शिव से भी बढ़ कर पवित्र होने की मेरी इच्छा है। सभी प्रकार के उत्तम वेदों, मन्त्रों, देवी, देवताओं से तथा सभी प्रकार के सन्यासी और गृहस्थों, धर्मिष्ठों, यतियों से भी जो बहुत पवित्र माने जाते हैं, मैं उनसे भी बढ़ कर पवित्र होऊँ, यही मेरी इच्छा है। सभी देवों ने कहा कि हे गयासुर ! तुम अपनी इच्छा के अनुसार ही वर प्राप्त करोगे, इस प्रकार कह कर सभी देवगण गयासुर को पुनः देख कर और पवित्र करने की भावना से स्पर्श करके अपने स्वर्ग लोक को चले गये। गयासुर के इस अनोखे और महान कार्य से तीनों लोक और यमपुरी सूनी हो गई, तब इन्द्रादि देवों के साथ यमराज ब्रह्मा जी के पास गये। गयासुर द्वारा अपदस्थ होने के कारण देवों ने प्रजापति से कहा कि पितामह ! तुम ने ही हम सब को अधिकार दिया था, अब उसे तुम्हीं ग्रहण करो। ब्रह्मा जी ने देवों की इस प्रकार बात सुन कर उनसे कहा कि हम सब मिलकर विष्णु भगवान के पास चलें यह निश्चय कर के भगवान विष्णु पास सब देवगण आये और कहने लगे कि हे देव !

आपने गयासुर को जैसा वरदान दे दिया है, उसके प्रभाव से प्रतिदिन प्राणी उनका दर्शन करके स्वर्ग को चले जाते हैं। और उसके फलस्वरूप तीनों लोक सूने हो गये हैं। देवों के इस प्रकार कहने पर भगवान वासदेव ने कहा कि आप यज्ञ करने के लिये गयासुर से प्रार्थना करें, कि वह अपना शरीर हमको देदे। विष्णु भगवान के इस प्रकार कहने पर ब्रह्माजी सभी देवों सहित उस महान गयासुर के पास गये। सभी देवों के साथ ब्रह्मा जी को आया देखकर गयासुर ने उनको प्रणाम किया, और श्रद्धापूर्वक उनकी पूजा आदि की।

गयासुर बोला— आज मेरा जन्म धन्य हुआ; जो कि स्वयं प्रजापति ब्रह्मा जी मेरे घर अतिथिरूप में आये हैं, आज मैंने सब कुछ पा लिया, हे योगीश्वर ! योग वेत्ता ! सभी लोकों के नाथ ! गुरुदेव ! ब्रह्मन् ! आप किस प्रयोजन से हमारे यहां पधारे हैं, मैं उस कार्य को पूरा करना चाहता हूँ।

ब्रह्माजी बोले— हे महाभाग गयासुर ! सम्पूर्ण संसार में घूम घूम कर मैंने जिन जिन तीर्थों को देखा है, वे तुम्हारे शरीर की पवित्रता के कारण यज्ञ के लिये पवित्र नहीं रहे हैं भगवान विष्णु की कृपा से तुमने अपने शरीर में परम पवित्रता प्राप्त की है, अतः में यज्ञ करना चाहताहूं, और उस यज्ञ के लिये तुम मुझे अपने पवित्र शरीर को देदो।

गयासुर बोला— हे देव देवेश ! आप हमारे शरीर को मांग रहे हैं। यह हमारा अहोभाग्य है। यदि आप हमारे इस शरीर से यज्ञ कार्य सम्पन्न करेंगे, तो हमारा पितृकुल कृतार्थ हो जायगा। हे देव ! आप ही ने इस नश्वर शरीर को बनाया है, और तुम्हीं ने इस को इतनी पवित्रता प्रदान की है। सभी जीवों के लाभ के लिये यह अवश्य ही दूंगा। श्वेत कल्प ने ऐसी बात सुनकर गयासुर नैर्ऋत दिशा की ओर धराशायी हो गया, उस समय सभी पर्वत प्रान्त में शोर मच गया। दैत्य ने अपने शिर को उत्तर दिशा में दोनों पैरों को दक्षिण दिशा में किया। यज्ञ की सभी सामग्री और साधनों

यज्ञ की सभी सामग्री और साधनों सहित ब्रह्माजी ने यज्ञ को सम्पन्न करने के लिये मानस पुरोहितों को पैदा किया। उनके नाम इस प्रकार हैं। अग्निशर्मा, अमृत, शौनक, जाञ्जलि, मृदु, कुमुथि वेदे कौण्डिल्य हारीत काश्यप, क्रुर, गर्ग, कौशिक, वसिष्ठ, तपस्वी भार्गव, पराशर, कण्व, माण्डव्य. श्रुतिकेवल, श्वेत, सुनाल दमन सुहोत्र, कङ्क, लोकाक्षि जैगिषव्य, दधिपत्रमुख, ऋषभ. कर्क, कात्यायन. गोमिल, उग्र सुपालक, गौतम जयमाली चाटुहास, दारुण, आत्रेय, अंगिरस, उपमन्यु, गौकर्ण गृहावास, शिखण्डी. उमाव्रत इन सब ऋषियों के अलावा और बहुत से ब्राह्मण को भी लोक पितामह ब्रह्माजी ने सृष्टि की और गयासुर के शरीर पर यज्ञ का कार्य शुरू किया। इन सब ऋषियों में से अग्निशर्मा ने अपने मुख से दक्षिणग्नि, गार्हपत्य, आहवनीय, सभ्य, और असभ्य नाम की पांच अग्नियों की रचना की। हे देवर्षि! इन्हीं पांच अग्नियों ने यज्ञ की प्रतिष्ठा की, यज्ञ सभी प्रतिष्ठापना के लिये ब्राह्मणों को बहुत सी दक्षिणाऐं दीं। यज्ञ के अन्त में ब्रह्माजी ने पूर्णाहुतदान के बाद अवभृथ स्नान किया और सभी देवों के साथ यज्ञ स्तम्भ को आरोपित किया। उस पवित्र स्तम्भ को ब्रह्माजी ने उत्तम सरोवर में निमज्जित करके उसी में प्रतिष्ठित भी किया। यज्ञ भूमि के चलायमान होने पर ब्रह्माजी चकित होकर धर्मराज से बोले–यमराज तुम्हारे घर एक शिला है, उसे बिना किसी वितर्क के यहां लाकर उस पर दैत्य के शिर को स्थित करो। गयासुर के शरीर को निश्चल स्थापित करने के लिये यमराज ने शिला लाकर उस के मस्तक को रखा, लेकिन उस शिला पर रखने पर भी असुर राजा उस शिला सहित विचलित हो गया। तब ब्रह्मादि देवों ने रुद्रादि देवों से कहा कि आप इस शिला को निश्कल करने के लिये स्थित हो जायँ। देवों ने 'बहुत अच्छा' कह कर उसी शिला पर स्थित हो गये। देवों के पैरों से आक्रान्त होने पर भी वह महाबलवान असुर विचलित होता रहा। तब चिन्ताकुल होकर ब्रह्मा जी भगवान विष्णु के पास गये और उनसे बोले–

ब्रह्माजी बोले— हे अखिलेश प्रभु! हम आप को नमस्कार करते हैं।

आप ही मनुष्यों को यश देने वाले हैं आप ही मुक्ति भुक्ति के देने वाले हैं। ब्रह्माजी की इस प्रकार स्तुति सुन कर विष्णु बोले हे देव! किस कारण से आप यहां पधारे हैं।

ब्रह्माजी बोले— हे भगवन्! आपकी आज्ञानुसार यज्ञ सम्पन्न तो हो गया, पर गयासुर अभी तक चंचल बना हुआ है। हम सबों ने उसके शिर पर देवरुपिणी शिला लाकर रखी है, फिर भी वह चलायमान है। रुद्रआदि देवगणों के पैरों से आक्रान्त होने पर भी वह महान असुर चंचल ही बना रहा। हे माधव! अब आप उसके निश्चल रहने के उपाय बतलाइये। ब्रह्माजी की इस प्रकार वाणी सुन कर भगवान विष्णु ने अपने शरीर से खींच कर एक मूर्त्ति ब्रह्माजी को गयासुर के निश्चल करने के लिये दी। ब्रह्माजी ने उस मूर्त्ति को लाकर गयासुर के मस्तक पर रख दी, किन्तु उस पर भी वह चलायमान ही रहा तो फिर विष्णु भगवान आये। ब्रह्माजी के स्तुति करने पर विष्णु क्षीर सागर से आकर उस गयासुर के मस्तक के ऊपर शिलापर स्थित हो गये। स्वयं भगवान जनार्दन ने उस को निश्चल करने के लिये स्वयं उस पर स्थित हुये। उसी शिला को अधिकाधिक निश्चल करने के लिये ब्रह्मा जी ने उसको पांच भागों में बांट दिया। वे पांचों वहां प्रपितामह, पितामह, फल्गवीश, केदार और कनकेश्वर के नाम से प्रसिद्ध हुये। उसी शिला पर गज रूपधारी विनायक भी स्थित हैं। सूर्य, गयादित्य, उत्तरार्क, और दक्षिणार्क इन तीन नामों से प्रसिद्ध हुये। लक्ष्मीजी सीता के नाम से सावित्री और त्रिसन्धा इन तीनों रूपों में वहां स्थित हुईं। इन्द्र, वृहस्पति, पूषा आठों वसुगण, विश्वेदेवगण, दोनों अश्विनीकुमार विश्व नामक मारुत, यक्ष, गन्धर्व, उरगादिकों के साथ साथ अपनी शक्ति सहित उस शिलापर विद्यमान हुये। अतः भगवान विष्णु की गदा से वह असुरराज स्थिर हुआ अतः भगवान वहां गदाधर के नाम से प्रसिद्ध हुए। उस समय सभी आये हुये देवगणों से गयासुर ने कहा हे देववृन्द! आप लोगों ने किस कारणवश हमको अलग किया है, मैंने यज्ञ के लिये अपने शरीर को ब्रह्माजी को प्रदान किया था, क्या मैं भगवान

विष्णु के वचन मात्र से निश्चल न हो जाता ? देवों तथा भगवान विष्णु की गदा से मैं बहुत दुखी हो चुका हूँ। आप सभी देवगण प्रसन्न रहें। गयासुर की इस प्रकार वाणी सुन कर सभी देवता बहुत प्रसन्न हुये। वे बोले—हे गयासुर हम सब तुमसे बहुत प्रसन्न हैं, तुम चाहो जो वरदान मांगो। गयासुर ने देवों से कहा कि—हे देवगण! जब तक यह पृथ्वी स्थिर है जब तक सूर्य चन्द्रमा, पर्वत, तारागण विद्यमान हैं तब तक इस शिला पर विष्णु, ब्रह्माजी, महेश्वर जी का निवास बना रहे, और इनके साथ सभी देवगण यहां निवास करें। इस क्षेत्र का नाम मेरे नाम पर पड़े। गया क्षेत्र की मर्यादा पांच कोस की है और गया शिर की मर्यादा एक कोस की है। इन दोनों के मध्य भाग में मानव हितकारी समस्त तीर्थों का निवास हो, आप लोग मुझ को ऐसा वरदान दें। इस बीच में स्नान आदि तर्पण करके और पिण्डदान करने से अयज्ञ फल की प्राप्ति होती है। इस महान प्रभाव शाली क्षेत्र में पिण्डदान सम्पन्न करने वाला मनुष्य अपने हजारों कुलों का उद्धार करता है। यहाँ पर सभी देवलोग अव्यक्त और व्यक्त रूप धारण करके निवास करें भगवान गदाधर भी यहां पर निवास करके समस्त पाप पुञ्जोंका नाश करें। इस पवित्र क्षेत्र के सेवन करने से ब्रह्म हत्या के घोर पाप भी नष्ट हो जाते हैं। इस पवित्र क्षेत्र में नैमिष, पुष्कर, गंगा, प्रयाग, काशी, जितने भी उत्तमोत्तम तीर्थ हैं तथा जितने भी तीर्थ स्वर्ग भूमण्डल, अन्तरिक्ष में हैं वे सभी हमारे इस तीर्थ में आकर प्राणियों का कल्याण करें। गयासुर के इस प्रकार बचन सुन कर विष्णु आदि देवों ने गयासुर से कहा हे गयासुर! तुमने जो कुछ कहा है वैसा ही होगा इसमें सन्देह नहीं है। इस क्षेत्र में आने वाले मनुष्य गण हमारी सभी देवों की पूजा करके परम गति को प्राप्त होंगे देवताओं के इस प्रकार वरदान देने पर दैत्य परम हर्षित होकर निश्चलता को प्राप्त हुआ। उस शिला पर देवगणों के स्थित हो जाने पर ब्रह्माजी ने यज्ञ कर्त्ता ब्राह्मणों को पचपन ग्राम प्रदान किये। उन्होंने गया पुरी को भी उत्सर्ग कर दिया। गृहस्थी के सभी साधनों से युक्त गृहों को बनबाया। इनके अलावा कामधेनु गाय, कल्पवृक्ष, पारिजात

देवतरु, क्षीर वाहिनी, महा नदी घृत पूर्ण छोटी छोटी बावड़ियां मधु प्रवाह करने वाली मनोहर नदी, सुवर्ण की बनी बावड़ी, अनेक अन्नादिकों से बने हुये पर्वत भोजन का फलादि सामग्री भी उन्हें निर्माण करके प्रदान की। दान करते समय अयोनिजा ब्रह्मा जी ने ब्राह्मणों से कहा कि हे श्रेष्ठ ब्राह्मणो! आप लोग किसी दूसरे से याचना न करें। इस प्रकार सभी प्रकार के दान देने के बाद भगवान गदाधर को नमस्कार करके ब्रह्माजी अपने लोक को चले गये। धर्मारण्य में धर्म ने एक यज्ञ का अनुष्ठान किया, उस यज्ञ में उन्हीं गयापुरी में निवास करने वाले ब्राह्मणों ने लोभवश धन की इच्छा की ओर उसे ग्रहण किया। उनके इन निषिद्ध कर्म से असन्तुष्ट होकर ब्रह्मा जी ने शाप दे दिया, कि तुम लोगों ने मेरे निखिल दिव्य सम्पत्ति के दान करने पर भी लोभ नहीं छोड़ा, अतः तुम सदा ऋण ग्रस्त बने रहोगे। वे नदियां जो मधु और क्षीरादि पदार्थों को देने वाली थीं, अब केवल जल बहाने वाली होंगी। सभी पर्वत पाषाणमय हो जायेंगे। वे दिव्य वस्तुओं सहित सुन्दर गृह मिट्टी के हो जायेंगे। कामधेनु और कल्पवृक्ष हमारे लोक में आ जायेंगे। अजन्मा ब्रह्माजी ने इस प्रकार ब्राह्मणों को शाप दे दिया और तब अभिशप्त होकर ब्राह्मणों ने प्रार्थना की कि हे देव! आपने जो वस्तुएँ कृपा पूर्वक हमको दीनी वे आपके शाप के कारण नष्ट हो चुकीं। हे भगवन् हम लोग किस प्रकार अपनी जीविका चलायेंगे। ब्राह्मणों की इस आर्त वाणी को सुनकर ब्रह्माजी को दया आ गई और वे बोले कि 'अच्छा' जब सूर्य चन्द्रमा तारागण स्थित हैं तब तक तुम लोग तीर्थों द्वारा अपनी जीविका चलाओगे। जो पुण्यशाली मनुष्य इस गयापुरी में आकर श्राद्ध कर्म करेंगे, हमारी पूजा आदि करेंगे, वे मनुष्य ब्रह्मलोक को प्राप्त करेंगे! इस गयापुरी में बिरज नामक गिरि से दैत्य का उदर भाग आक्रान्त है, उसके नाभि के पास विरजा देवी नामक पवित्र स्थान पर सिण्डदान करके मनुष्य अपने इक्कीस कुलों का उद्धार करता है तथा वर्तमान अपने सम्पूर्ण कुल को स्वच्छता के साथ तारता है।

महेन्द्र नाम के पर्वत ने दैत्य के दोनों पैरों को निश्चल किया है अतः उस पवित्र स्थान पर जो मनुष्य पिण्डदान करता है वह अपने सात कुल के मनुष्यों का उद्धार करता है ॥१०९॥

[इति श्री वायु महापुराण का गयामाहात्म्य नामक एक सौ छटवाँ अध्याय समाप्त]

—:❀:—

एक सौ सातवां अध्याय

गयामाहात्म्य

नारदजी बोले—हे ब्रह्मन् ! वह प्रसिद्ध शिला किस प्रकार पैदा हुई, जिससे गयासुर का शरीर दबाया गया था उसका स्वरूप और माहात्म्य क्या है। यह सब बात हमको बतलाइये।

सनत्कुमार बोले—प्राचीन काल में महान प्रतापी तेजस्वी, धर्म वेत्ता धर्म नाम के देवता थे। उनके पतिव्रत विश्वरूपा नाम की पत्नी थी। उस पत्नि में धर्म के संयोग से धर्मव्रता नामकी एक कन्या पैदा हुई, वह सती कन्या रूप, यौवन से भरपूर लक्ष्मी के समान गुणवती थी। धर्मव्रता के लिये धर्म ने वरदान से सिद्ध प्राप्त करने के लिये अपनी कन्या धर्मव्रता से कहा हे बेटी ! तुम अपने अनुरूप वर के लिये तपस्या करो। कन्या ने अपने पिता की आज्ञा मानकर वन में जाकर तपस्या आरम्भ की, और उसने दस हजार वर्षों तक केवल वायु का आहार किया। ब्रह्माजी के मानस पुत्र मरीचि जो बहुत प्रसिद्ध थे, वे पृथ्वी पर घूमते हुए वहां आ पहुँचे, और रूप और यौवन से पूर्ण कन्या को देखा, जो तपस्या करने में निरत थी। ऋषिवर मरीचि ने उस कन्या से कहा कि हे कल्याणि तुम कौन हो ? तुम किसकी कन्या हो ! हे सदव्रत परायणे ! तुमने सुन्दर रूप से हमारा मन मोह लिया है। हे भीरु ! तुम डरो मत। मैं ब्रह्माजी का पुत्र हूँ, मुझे इस समस्त संसार में मनुष्य मरीचि नाम से पुकारते हैं। मरीचि के वचनों को सुनकर कन्या बोली। हे मुनिवर ! मैं धर्म की पुत्री हूँ ! मेरा नाम धर्मव्रता है। अपने अनुरूप पति और पतिव्रत धर्म की प्राप्ति के लिए मैं

यह कठिन तपस्या कर रही हूं। धर्मव्रता की इस प्रकार बातों को सुन कर मरीचि ने प्रेम पूर्वक कहा हे शुभव्रते! मेरे दर्शन मात्र से ही तुम पतिव्रता हो जाओगी। केवल मैं पतिव्रता नारियों की इच्छा से ही रात दिन पृथ्वी पर घूमा करता हूं। यदि तुम पतिव्रता हो तो मुझको पति रूप में स्वीकार करो, मैं तुमको पत्नि रूप में स्वीकार करता हूं। इस लोक में न तो तुम्हारे समान कोई कन्या है और न मेरे समान कोई पुरुष है हे धर्म व्रते! अब तुम हमारी धर्म पत्नि हो जाओ। मुनिवर मरीचि की इस प्रकार बात सुनकर धर्मव्रते ने कहा कि इस विषय में आप हमारे पिता से बात चीत करें। धर्मव्रता के कहे अनुसार मरीचि धर्म के पास आये, धर्म ने तेजस्वी ऋषि मरीचि को आसन और अर्घ्यादि प्रदान किया। और बोले कि हे मुनिवर! किस प्रयोजन से आप का यहां आना हुआ? मरीचि बोले महानुभाव सुनो! मैं अपने योग्य पत्नि की खोज के लिए समस्त पृथ्वी पर घूमता फिर रहा था। कि तभी तुम्हारी परम सुन्दरी और धर्मशीला कन्या का दर्शन हुआ, तुम अपनी कन्या का विवाह मेरे साथ कर दो। तुम्हारा बहुत कल्याण होगा। ऋषि की इस प्रकार बातें सुनकर धर्म ने अर्घ्यादि से पुनः पूजन किया, और उनकी आज्ञा का पालन किया। वन से धर्मव्रत कन्या को घर पर लाकर विधि पूर्वक विवाह कर्म सम्पन्न करके मरीचि को समर्पण किया। उस मंगल कार्य के उपलक्ष में धर्म ने ब्राह्मणों को रत्न आदि भेंट किये। इसके बाद अपनी नवविवाहित पत्नि धर्मव्रता को अग्निहोत्रादिक वैवाहिक धार्मिक विधियों से विधिवत् अनुष्ठान करके अपने आश्रम में ले गए और वहां उनके साथ इस प्रकार आनन्द भोगने लगे, जिस प्रकार विष्णु भगवान ने लक्ष्मी के साथ, और शंकरजी ने पार्वती के साथ, ब्रह्मा जी ने सरस्वती के साथ, आनन्द भोगा था। धर्मव्रता के संयोग से ऋषि मरीचि ने परम तेजस्वी सौ पुत्रों को पैदा किया। एक बार मुनि फल फूलादि लेने वन को चले गये और वहां से लौट कर आये तो बहुत थक गये थे, भोजन के बाद उन्होंने अपनी पत्नि से कहा कि

प्रिये ! मैं शय्या पर लेट गया हूँ, तुम मेरे पैर दबा दो। ऋषि पत्नि ने पति की आज्ञा मान शय्या पर लेटे हुये अपने पति के पैर दबाने लगी सर्वप्रथम घी लगाकर वह तन्मयता पूर्वक पैर दबाने लगी, थोड़ी ही देर में मुनि को नींद आ गई तो उनके पिता ब्रह्माजी उनके आश्रम में पधारे। ब्रह्मा जी को आया जानकर साध्वी धर्मव्रता ने मन में प्रभु की सेवा का ध्यान किया। उसके मनमें तक वितर्क होने लगा, और वह सोचने लगी कि ऐसी स्थिति में क्या करना चाहिये, जब कि उसके पति सो रहे हैं। मैं पतिदेव के पैर दबाती रहूंगी पूज्य पिता ब्रह्मदेव की पूजा करूँ। ऐसा विचार करके उसने शीघ्र ही उठ कर जगदगुरू ब्रह्मा जी को अर्घ्यपाद्यादि प्रदान किया और विधि पूर्वक पूजा करी। विधि पूर्वक सत्कार पाने पर ब्रह्माजी दूसरी शय्या पर विश्रम करने लगे। दुर्भाग्यवश इसी बीच ऋषि की आंख खुल गई, वे अपनी शय्या पर से उठ बैठे। और धर्मव्रता को पैर दबाते नहीं देखा, तो क्रोध में आकर उन्होंने शाप दे दिया। कि बिना मेरी आज्ञा के पैर दबाना छोड़कर तू कहीं और चली गई अतः इस पाप कर्म के कारण मैं तुझे शाप दे रहा हूं कि तू शिला हो जाय। पति के इस प्रकार शाप देने पर धर्मव्रता को भी क्रोध आगया, और बोली तुमको नींद आगई थी, उसीसमय तुम्हारे पिताजी यहां पर पधारे. तुमको सदा उठ कर गुरू का पूजन वन्दनादि करना चाहिये। अतः मैंने धर्म का विचार करके तुम्हारे ही कर्त्तव्य का पालन किया है। मैं इसमें बिलकुल निर्दोष हूँ तुमने मुझको व्यर्थ ही में शाप दिया है। अतः मैं भी तुमको शाप दे रही हूँ कि तुमको श्री महादेवजी शाप देंगे, इसमें सन्देह नहीं है। अपने पति को शाप के भय से व्याकुल देख कर धर्मव्रता भी व्याकुल हो गई, वह प्रजापति ब्रह्माजी के पास गई उस समय संयोगवश ब्रह्माजा को नींद आ गई। उनको नमस्कार करके वहीं पर ईंधन से अग्नि को जलाकर और उसी में आहपत्याग्नि में स्थित होकर परम दारुण तप में लीन हो गई। उधर मरीचि भी अभिशप्त होकर विष्णु भगवान के पास गये उस समय श्री विष्णु भगवान भी लक्ष्मी जी सहित क्षीर सागर में शयन कर रहे थे।

इन दम्पत्तिकी दारुण घोर तपस्यासे इन्द्र आदि देवगण बहुत दुखी हुये, और सोचा कि यह दम्पति जो घोर तप कर रही है इसका क्या उपाय किया जाय जिससे इनका यह घोर तप भंग हो अन्त में विचार कर विष्णु भगवान के पास जाकर भगवान से कहा कि भगवान हमारी रक्षा कीजिये। सभी देवों की इस प्रकार आर्तवाणी सुनकर विष्णु धर्मव्रता के पास आये और बोले कि हे पतिव्रते! अग्नि में स्थित होकर कठोर दारुण तपस्या को किसी ने नहीं किया. तुमने संसार को भयभीत करने वाले परमदारुण तप का अनुष्ठान कियाहै, जिसे कोई भी नहीं कर सकता है। तुम धर्म के अर्थ को जानने वाली हो। तुम अपनी इच्छा के अनुरूप वरदान मांगो। विष्णु प्रभृति आदि देवताओं के वचनों को सुनकर साध्वी धर्मव्रता ने कहा कि हे देववृन्द! मैं अपने स्वाभाविक तेज से ऋषि पति के शाप का निराकरण नहीं कर सकती थी, अतः उसी शाप को मिटाने के लिये ही मैंने इतना दारुण तप किया है। पतिदेव मुनिवर मरीचि ने मुझे शाप दे दिया है, वह दूर हो जाय यही मेरी अभिलाषा है! पवित्रता धर्मव्रता की बातों को सुनकर देवताओं ने पुनः महा, धर्म पुत्रि धर्मव्रता! यह शाप परम ऋषि मरीचि का दिया हुआ है, इस शाप को देवताओं और ब्राह्मणों में निष्फल करने की शक्ति नहीं है। इस कारण तुम हमसे कोई और वरदान मांगो। जिससे धर्म की मर्यादाभंग न हो। हे शुभव्रते! तीनों लोकों में चाहे परम दुर्लभ क्यों न हो ऐसा वरदान तुम मांग सकती हो। देवों की इस प्रकार वाणी सुनकर धर्मव्रता ने कहा हे देववृन्द! यदि आप पति के शाप को हटाने के लिये असमर्थ हैं तो आप मुझ को इस प्रकार का वरदान दीजिये कि मैं निखिल ब्रह्माण्ड में परमपावन शिला के रूप में प्रकट होऊँ। जितने भी नदी, नद, सरोवर, तीर्थ, एवं देवादि हैं, उन सबसे अधिक पवित्रता का निवास मुझ में हो। जितने भी ऋषि मुनि पंडित, ज्ञानी, वाजपेयी, यज्ञहोत्री, यजुर्वेदी, वेदपाठी, गन्धर्व यक्षादि-बृहस्पति, आदि प्रमुख देवगण हैं, उन सबसे भी अधिक पवित्रता निर्मलता मेरे अन्दर हो। तथा मैं इतनी पवित्र हो जाऊँ कि

सम्पूर्ण त्रैलोक्य में जितने जितने व्यक्ताव्यक्त लिङ्गादि हैं, वे सब तीर्थ रूपधारण करके हमारे शरीर पर निवास करें। भूमण्डल के समस्त तीर्थ प्रमुख नक्षत्र, सभी देवगण, देवियां और मुनिगण सभी हमारे अन्दर निवास करें। शिला पर स्थित उन तीर्थों को स्नान और तर्पण करके जो पिण्डदान करते हैं वे ब्रह्मलोक को प्राप्त होंगे। उस शिला पर दृश्यतीर्थ गदाधर सभी तीर्थों में श्रेष्ठ हों, वहां श्राद्ध कर्म करने से पितरों को मोक्ष प्राप्त होता है। जरायुज, अण्डज, स्वेदज, और उद्भिज सभी प्रकार के जीव निकाय पवित्र शिला पर प्राण त्याग कर विष्णु लोक को प्राप्त हों। जिस प्रकार विष्णु भगवान की पूजा करने पर सभी प्रकार के यज्ञ पूर्ण हो जाते हैं, उसी प्रकार श्राद्ध, तर्पण और स्नान करने से यहां अक्षय फल प्राप्त हो। मेरे शरीर पर देवेशों के मन्त्रों का जो जाप करे, वे मनुष्य थोड़े ही समय में सिद्धि प्राप्त करें। अपने सहित पितरों और सहस्रों कुलों का वह मनुष्य उद्धार करने वाला हो। उस पवित्र शिला पर श्राद्ध इत्यादि कार्य सम्पन्न करके पितरों को तृप्त करने वाला विष्णु लोक को प्राप्त करे। गंगा प्रभृति श्रेष्ठ नदियां, मनोहर झाने, सरोवर, समुद्रादि पवित्र मानस तीर्थ इन्द्रादि देवगण हों, वे श्राद्ध कर्त्ता को मोक्ष प्रदान करने के लिये मेरे शरीर पर निवास करें। देवगण आप मूर्ति रूप में यहां पर स्थित रहें, कहीं और जगह नहीं जांय। विद्वान पुरुष तीन स्वरूपों में व्यक्त होने वाले एक मात्र भगवान विष्णु का जब तक वर्णन करें, तब तक उस शिला पर सभी देवता तथा तीर्थ स्थित रहें। मुनियों और गन्धर्वों का भी वहां पर निवास हो। जब तक यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड स्थित है, तब तक इस शिला का अस्तित्व रहे। पत्थर रूपी मेरे इस शरीर पर स्थित हो कर जो मनुष्य जप, पूजा, ध्यान, तपस्या और हवन इत्यादि करें, वे अक्षयफल को प्राप्त करें। हे देवगणो! आप लोग शिलाओं और पर्वतों का रूप रख कर मेरे इस पत्थर रूप शरीर पर स्थित रहें। पतिव्रता धर्मव्रता के शुभ वचनों को सुन कर देवगणों ने कहा, हे 'धर्मव्रते! तुम्हारी सब मनोकामनाऐं पूर्ण होंगी, इसमें सन्देह नहीं है।

जब तुम गयाशिर पर स्थित रहोगी, तब उस समय चरणादि स्वरूप से हम लोग तुम्हारे शरीर पर स्थित होंगे, इस प्रकार सभी देवता धर्म-व्रता को यह वरदान देकर अपने लोक को चले गये ॥ १०७ ॥

[इति श्री वायु महा पुराण का गया माहात्म्य नाम का एक सौ सातवां अध्याय समाप्त हुआ]

एक सौ आठवां अध्याय

[गया माहात्म्य]

सनत्कुमार बोले— हे नारद जी ! अब मैं आपको इस शिला के माहात्म्य के विषय में बतलाऊँगा इस शिला के माहात्म्य का वर्णन बड़े बड़े ऋषि, देवता, मुनिगण किया करते हैं जिस शिला के माहात्म्य को सुनने से अक्षय मोक्ष फल प्राप्त होता है ।

सनत्कुमार बोले— हे नारद जी ! वह परम पवित्र शिला पृथ्वी पर देव स्वरूप से स्थित थी । उस शिला का नाम विचित्र था, और इसी विचित्र नामसे वह तीनों लोकोंमें प्रसिद्ध थी । उसके स्पर्श मात्रसे ही सभी लोकोंके प्राणी विष्णु धाम को जाते हैं । इस प्रकार जब तीनों लोक शून्य हो गये, यमपुरी भी सूनी हो गई तो यमराज इत्यादि सभी देवगणों को बहुत चिन्ता हुई और वे सब प्रजापति ब्रह्माजी के पास गये और उनसे कहने लगे कि हे पितामह ! आप यम दण्ड और उन के अधिकारों को स्वयं ग्रहण कीजिये, ब्रह्माजी ने तब यमराजसे कहाकि उस शिला को तुम अपने घर पर स्थित करो । ब्रह्माजी की इस प्रकार आज्ञा पाकर धर्मराज ने उस शिला को अपने घर लाकर स्थित किया । और फिर पूर्ववत् शासन आदि की व्यवस्था उन्होंने कायम की । इस प्रकार वह महान पवित्र शिला समस्त संसार में प्रसिद्ध हुई, जिस प्रकार ब्रह्मा, विष्णु, महेश का यश, कीर्ति सम्पूर्ण संसार में व्याप्त है, निखिल ब्रह्माण्ड में जिस प्रकार सुमेरु पर्वत की महिमा फैली हुई है, उसी प्रकार यह देव स्वरूपिणी शिला भी संसार में अपने माहात्म्य से प्रसिद्ध है अपने भारीपन बोझ के कारण यह गयासुर के शिर पर स्थित है । इन दोनों पवित्र आत्मा का संयोग पितरों को मोक्ष प्रदान करने वाले

हैं। उन दोनों परम पवित्र आत्मा के संयोग स्थली पर अजन्मा ब्रह्मा जी ने अश्वमेध यज्ञ का अनुष्ठान किया था, यज्ञ में अपने भागों को प्राप्त करने के लिये समागत विष्णु आदि मुख्य देवों से शिला ने पुनः कहा कि हे देवगणों! इस शिला पर स्थित रहने की प्रतीज्ञा, पितरों की मुक्ति के लिये आप लोग करें विष्णु आदि देवों ने उनकी आज्ञा का पालन किया और यहां पर सदा के लिये स्थित हो गये। दैत्य के शिर की तरह वह शिला स्थित है। अतः उस स्थान को मुण्ड पृष्ठादि नाम से पुकारते हैं। वह स्थान पितरों को ब्रह्मलोक प्रदान करने वाला है। शिला का चरण भाग प्रभास नामक गिरि से शोभित है, सूर्य की किरणों से प्रकाशित होने के कारण वह गिरि प्रभास नाम से प्रसिद्ध है। उस प्रभास गिरि को भेदता हुआ शिला का अंगुष्ठभाग बाहर की तरफ निकला हुआ है। उस उठे हुये स्थान को शिलाङ्गुष्ठ के ईशप्रभाशेष के नाम से प्रसिद्ध है। शिलांगुष्ठ के एक छोर को प्रेत शिला कहते हैं। उस प्रेत शिला पर पिण्डादि दान करने से मनुष्यों के पितरगण प्रेत योनि से छूट कर मुक्ति पा जाते हैं। महानदी और प्रभास तीर्थ के संगम स्थल में मनुष्य को स्नान करना चाहिये, इस पवित्र स्थल पर श्री भगवान रामचन्द्र जी ने अपनी प्यारी पत्नि जानकी के साथ स्नान किया था, तभी से इस पुण्यस्थल को रामतीर्थ कहते हैं। इस पवित्र स्थल पर भगवान राम से स्वयं महानदी ने प्रार्थना की थी, कि हे भगवान राम! आप यहां स्नान करलें। इसी कारण वह पवित्र स्थान तीनों लोकों में रामतीर्थ के नाम से प्रसिद्ध है। सैकड़ों जन्म के पाप कर्म भी इस पवित्र रामतीर्थ के स्नान करने से छूट जाते हैं। इस मन्त्र का उच्चारण करके जो मनुष्य रामतीर्थ में स्नान कर पिंडदान करे, वह भगवान विष्णु के धाम को जाता है। महानदी की इस प्रकार प्रार्थना को सुनकर राम के भाई भरत जी और भगवान राम वहां पर ठहर गये थे। महाबाहु, अभयदान करने वाले भगवान राम हम आपको बारबार प्रणाम करते हैं. हे देवेश! मेरे सभी पाप कर्मों का नाश हो जाय। इस मन्त्र का उच्चारण करते हुये जो प्राणी इस राम

तीर्थ में स्नान कर पिंड सहित श्राद्ध कर्म को पूर्ण करते हैं। उनके पितरगण प्रेत योनि से छूट कर पितर लोक को प्राप्त होते हैं। हे देवेश! आप ही जल स्वरूप हैं सूर्य चन्द्र ज्योति पदार्थों के पालन करने वाले आप हो हैं, हे देव! मेरे मनसा वाचा कर्मणा के सभी पापों को नष्ट कर दीजिये।

इस मन्त्र से पुमासेश को बारबार नमस्कार करने के बाद परम ज्योतिर्मय शिव के पास जाना चाहिये और वहां शिव को नमस्कार करके यमराज के लिये बलिकर्म करना चाहिये। श्री राम जी के वन चले जाने के बाद उनके भाई भरत जी पर्वत पर आकर रहने लगे, और वहीं पर उन्हों ने पिता के पिंडदानादि कार्य को सम्पन्न कर श्री राम सीता, लक्ष्मण और दूसरे ऋषि मुनि गणों की प्रतिमा की स्थापना की थी। महात्मा भरत के उस पवित्र आश्रम में सदा पवित्रात्मा निवास करते हैं। वहीं पर मतंग ऋषि का आश्रम भी है जो सभी मनुष्यों को दिखाई देता है। उस मतंग पद में श्राद्ध करने वाला मनुष्य अपने सभी पितरों का उद्धार करता है। पुण्य पवित्र राम तीर्थ में स्नान करके मनुष्य राम और सीता की पूजा करके श्री रामेश्वरको प्रणाम करके पुनः दूसरा जन्मधारण नहीं करता अतः उसको मोक्ष पद प्राप्त होता है उस शिला का जघन प्रान्त पर्वत से आक्रान्त है स्वयं धर्मराज ने उससे कहा था कि तू मत जा। इसी कारण वश उसका नाम नग पड़ा था। उस स्थान पर यमराज और धर्मराज गयासुर को निश्चल करने के लिये स्थित हैं। पितरों को मोक्ष प्राप्त हो, इस इच्छा से मैं उन दोनों को बलि प्रदान करता हूं। दो श्वान, श्यामल और भूरे भी वहां पर स्थित हैं वे दोनों वैवस्वत कुल में उत्पन्न हुये थे। मैं उन दोनों को बलि प्रदान करता हूं। यहां ब्रह्म योनि में स्नान करने पर ब्रह्म लोक की प्राप्ति होती है। इससे ब्रह्म की प्राप्ति तथा संकटों से मुक्ति मिलती है। तथा उसके पित्रीगण स्वर्गको प्राप्त करते हैं। सर्व सिद्धि प्राप्त होती है।

इस कारण वे अपनी हिंसक प्रवृति छोड़ दें। शिला के दाहिने हाथ पर कुण्ड नामक पर्वत स्थित है। वहाँ पर तिमिरादित्य, ईशान, भर्ग, महेश्वर अग्नि दोनों वरुण चारों रुद्र स्थित हैं वे पितरों को मोक्ष प्रदान करते हैं। भरत के पवित्र आश्रम में जाकर जो मनुष्य उनकी पूजा वन्दनादि करते हैं उनको अक्षय फल प्राप्त होता है। देवर्षि भरत के पवित्र आश्रम में स्नान कर मनुष्य श्राद्धादि कार्य सम्पन्न करे, वे श्राद्धादि कल्प पर्यन्त तक फल देने वाले होते हैं। भरत जी के इस पवित्र आश्रम में जो भी कुछ दान देते हैं उससे अनन्त अक्षय फल प्राप्त होता है। चारों युगों का स्वरूप धारण कर सूर्य की चार मूर्तियाँ वहां पर प्रतिष्ठित हैं। उनके दर्शन और स्पर्श पूजन से पितरों को मुक्ति प्राप्त होती है। वहाँ पर मुक्ति और वामन तारक नाम की दो मूर्तियां और भी स्थित हैं। वे समस्त संसार के दुखों को पार लगाने के लिये देवरूपी नौका हैं। सभी मृत और जीवित प्राणियों के उद्धार करने वाले एकमात्र भगवान ब्रह्मा ही हैं। जो मनुष्य त्रिविक्रम वामन देव का दर्शन करते हैं वह धर्मात्मा अपने पितरों सहित परम गति को प्राप्त होते हैं। शिला के बाँये चरण पर भी अभ्युद्यन्तक नामक गिरि स्थित है, उस स्थान पर पिण्डदान करने से मनुष्य अपने पितरों को ब्रह्मलोक में पहुँचाता है। पवित्र नैमिषारण्य के पास दूसरे देवताओं के साथ ब्रह्माजी ने यज्ञ का अनुष्ठान किया था, इस कारण उस तीर्थ का नाम मुख्य तीर्थ पड़ा, उसके चरणों में देवगण स्थित हैं। हे श्रेष्ठ नारद जी! उस पवित्र तीर्थ के सिर्फ तीन चरण भूमि में मनुष्य के जो कुछ भी पाप कर्म होते हैं, वे सभी नष्ट हो जाते हैं। वह पवित्र तीर्थ नैमिषारण्य पुण्य ऋषि मुनियों द्वारा सेवित है। वहाँ व्यास मुक, पैल, कण्व, वेधा, शिव, हरि इत्यादि देवगणों का निवास स्थान है। उनके केवल दर्शन करने से ही मनुष्य के सभी पाप कर्म नष्ट हो जाते हैं। शिला के बांये हाथ पर उद्यन्तक नामक गिरि स्थित है। अगस्त्य ऋषि ने उस पर्वत को यहां लाकर स्थित किया था। उस पर्वत प्रान्त पर स्वयं

प्रजापति ब्रह्मा जी और शंकर जी ने कठिन तपस्या की थी। वहाँ अगस्त्य ऋषि का परम रमणीक कुण्ड स्थित है। जिसमें आठ ऋषियों ने कठोर तपस्या कर सिद्धि को और शिव का दर्शन प्राप्त किया था। उस कुण्ड में अगस्त्य ऋषि ने आठों मुनियों को प्रणाम करके मनुष्य के पितरों को ब्रह्मपुर पहुँचाया था। उस कुण्ड में अगस्त्य ने शिला के बांये हाथ पर उदयाचल पर्वत से लाकर इस पर्वत को स्थित किया था। उस पर्वतीय प्रान्त में स्वयं ब्रह्मा जी ने तपस्या की थी। यह परम कल्याण देने वाला है। इस पुण्यमय पर्वत पर अनेकों प्रकार के बाजों एवं संगीत की ध्वनि होती रहती है। वह सर्व प्रथम वादित्रक गिरि के नाम से प्रसिद्धि है। उस पर्वत की शिखिर पर विद्याधर गन्धर्व और अप्सराओं के झुण्ड आज भी गान किया करते हैं। मोहन, सुनीथ, शैलूज, मोहनोत्तम, पर्वत नारद, ध्यानी, संगीती, पुष्यदन्तक, हा हा हू हू आदि गन्धर्वगण वहां पर संगीत का दान करते रहते हैं। वहां चित्ररथ अन्य गन्धर्वों के साथ रहता है। वे सब गन्धर्वगण इस पवित्र और मनोहर पर्वत पर गीत गा गा कर महान उत्सव करते हैं। इसी कारण से यह पर्वत देवों द्वारा सेवनीय रहा है। गीत एवं वाद्यों से निनादित इस पर्वत पर महादेव जी पार्वती के साथ आनन्द करते हैं। इनकी पूजा करने से पितृगण परमगति को देते हैं। अतः उन महादेव जी का ध्यान अवश्य करना चाहिये। हे मुने! भगवान रुद्र की पूजा करने पर मनुष्य वैष्णवी माया से छूट जाता है। इस गया क्षेत्र में गदाधारी अथवा गोपालक भगवान वास करते हैं। शिला के दाहिने हाथ पर 'भस्म कूट' नामक पर्वत है। उस पर महर्षि अगस्त तथा उनकी पत्नी और धर्मराज बिराजते हैं। अगस्त के चरण प्रान्त में पिण्डदान करने वालों को ब्रह्मलोक प्राप्त होता है। महर्षि अगस्त ने लोपा मुद्रा के लिये यहीं वरदान ब्रह्मा जी द्वारा प्राप्त कराया था। यह स्थल पितरों को परम गति प्रदान करता है। वहां अगस्तेश्वर के दर्शन कर मनुष्य की ब्रह्म हत्या के पाप से मुक्ति होजाती है। स्त्री सहित अगस्त ऋषि की पूजा करने से

ब्रह्मलोक की प्राप्ति होती है। सीताचल के दक्षिण की ओर पर्वत पर दण्डी ऋषि ने तप किया था। वहां पर बटेश्वर नाम का बट का वृक्ष है। उसके नीचे प्रजापति ब्रह्मा का स्थान है। उससे आगे रुक्मिणी कुण्ड नामक तीर्थ है। पश्चिम में कपिला नाम की नदी है। उस नदी के तट पर कपिलेश का स्थान है। सोमवती अमावस्या के अवसर पर कपिला नदी में स्नान करके कपिलेश की विधि पूर्वक पूजा करके पिण्डदान और श्राद्ध आदि कर्म करके पितरगणों को सन्तुष्ट करना चाहिये। उद्यन्तक पर्वत के पास लगी हुई एक अग्निधारा बहती है। वहीं एक सारस्वत नामक कुण्ड है जिसे सरस्वती ने स्थापित किया था। उस स्थान पर शुक्राचार्य जी अपने पुरोहितों द्वारा बिराजते हैं। हे श्रेष्ठ मुनि उस पवित्र स्थान पर मुनियों की पूजा और श्राद्ध पिण्डदान करने वाले मनुष्य के पितरों का उद्धार हो जाता है। शिला के बांये ओर गृध्रकूट नामक पर्वत है। अनेक महान ऋषियों ने गृध्र का रूप धारण करके वहां पर तपस्या कर परम सिद्धि प्राप्त की थी। इसी कारण इस पर्वत का नाम गृध्रकूट पर्वत है। यहीं गृध्रेश्वर का निवास है यहां गृध्रेश्वर भगवान का पूजन करने से मनुष्य शम्भु के लोक को प्राप्त करते हैं गृध्रगिरि की गुफा में पिण्डदान करने वाला मनुष्य शिवलोक को जाता है। उसी स्थान पर एक वट है उस वट को नमस्कार करने से सभी मनोकामनायें पूर्ण होती हैं तथा स्वर्ग मिलता है। वहां पर भगवान शंकर के दर्शन करके मनुष्य ऋण और पापों से छूट जाता है, उसे शिवलोक की प्राप्ति होती है। एक शूलक्षेत्र नामक तीर्थ है। उसमें पिण्डदान करने से पित्रीश्वरों की तृप्ति होती है तथा वे स्वर्ग को जाते हैं।

गयासुर के ऊपर रखी गई शिला को उदर देश 'आदिपात्र' नामक पर्वत से व्याप्त है। उस पर विघ्नेश्वर गणेश जी गज का रूप धारण करके विराजमान हैं उनके दर्शन विघ्नों को दूर करते हैं पितरों को स्वर्ग प्रदान करते हैं। उसी शिला के बांये चरण की ओर एक धर्मराज द्वारा स्थापित प्रेतगिरि नामक पर्वत है। यह पापों के कारण

अधिक मलिन था। तब इसे प्रेतशिला कहते थे। धर्मराज ने इसे पैरों के द्वारा फैंक दिया। तब यह उक्त शिला से स्पर्श पाकर पवित्र होगया। यहीं पर एक प्रेतकुंड है। इसमें पिंडदान करने से मनुष्य अपने पितरों को मुक्त करता है। गया तीर्थ में पितरों की मुक्ति के लिये पिंडदान करते समय अनेक प्रेत लोग विघ्न बाधा डाल कर वहां मनुष्य के रूप में आ जाते हैं। धनुष धारण किये वे बहुत ही विघ्न डालते हैं, हाथ पकड़ लेते हैं। एक वहीं पर 'मुण्डपृष्ठा' नाम की शिला है, जो महादेव जी के चरणों से अंकित है। महादेव जी यहीं निवास करते हैं। उसका दर्शन करने पर सभी पाप छूट जाते हैं। यहीं 'गयाशिर' अति पवित्र स्थान है जो समस्त प्रेतों से रहित है। उसे सबसे पवित्र और सुन्दर कहा है। मगध के सम्पूर्ण तीर्थों में गया सबसे पुण्य शालिनी है। आश्रमों में च्यवन का आश्रम बहु पुण्यप्रद है। नदियों में पुनपुना नदी सबसे पुनीत है। इसी प्रकार बैकुंठ, लोहदंड, गृध्रकूट तथा शोणक भी पुण्यमय हैं। इन सभी स्थानों में पिंडदान व श्राद्ध करने से मनुष्य अपने पितरों को ब्रह्मपुर पहुँचाते हैं। मुण्ड पृष्ठ पर मुनि ने कौआ का रूप धारण करके तपस्या की थी। उनके चरणों के चिन्हों से यह चिन्हित है। इसी कारण इसका नाम 'क्रौंचपाद' पड़ा है। वहां के जलाशय में स्नान करने पर स्वर्ग की प्राप्ति होती है। काक शिला पर कौआ का बलिकर्म ऋण से मुक्ति दिलाने वाला है। मुण्डपृष्ठ की उसी तलहटी में लोमश ऋषि और लोमहर्षण दोनों का तप स्थान है, जहां उन्हें परम सिद्धि प्राप्त हुई थी। लोमश ने यहां की नदियों में श्रेष्ठ महानदी, शरावती, होजवती, चन्द्रभागा, सरस्वती, कावेरी, सिंधुवीरा, चन्दना वाशिष्ठी, सरयू, गंगा, यमुना, गंडकी, इन्दिरा, स्वर्ग की निराचरा वैतरिणी, अलकनन्दा, उदीची कनका, कौशिकी, ब्रह्मदा आदि जो सभी श्रेष्ठ तथा पापों को नष्ट करती हैं, इन सबका आवाहन किया था। लोमहर्षण ने मुक्ति प्रदायनी कृष्णवेणी और चर्मवती नामक दोनों नदियों को अपने तपोबल से आवाहन किया था। इन सभी नदियों में स्नान करके पिंडदान करने वालों के पाप छूट जाते हैं।

नियम पूर्वक तीन दिनों तक वहां निवास करना चाहिये। ऐसा करने से व्यक्ति पांचों प्रकार के पापों से छूट कर पितरों को स्वर्ग दिलाता है।

भस्मकूट पर जनार्दन भगवान का निवास है। उनको अपासक हो कर तिलोंका दान अपने लिये तथा अन्य लोगों के लिये करना चाहिये। जीवित लोगों के लिये दही मिलाकर विण्डदान करे। ऐसा करने वाले सभी विष्णु लोक को जाते हैं पिण्डदान करते समय निम्न प्रकारसे कहे

"हे प्रभो! हे जनार्दन! यह पिण्ड मैं जिसके नाम से दे रहा हूं उसकी मृत्यु के बाद आप उसे यह पहुँचा दें। हे जनार्दन! यह पिण्ड मैं अपना आपके हाथों में प्रदान करता हूं, जब मेरा अन्त हो जाय तो इसे गयाशिर में मुझे प्रदान करना। हे जनार्दन! आप पितरों को मुक्ति देने वाले हैं। हम आपको नमस्कार करते हैं। आप पितरों के स्वामी हैं तथा स्वयं पितृरूप हैं। आपको नमस्कार है।

इस गया क्षेत्र में जनार्दन भगवान स्वयं ही विराजमान रहते हैं उन पुण्डरीकाक्ष प्रभु का दर्शन तीनों पापों (दैहिक, दैविक व भौतिक) से मुक्ति प्रदान करता है। हे लक्ष्मीकान्त! आप तीनों ऋणों से मुक्ति देने वाले हैं हमारे पितरों को मुक्ति प्रदान करो, आप को नमस्कार है। भीम ने अपना बायां घुटना टेक कर जनार्दन भगवान को नमस्कार किया था। और पिण्डदान करके भाइयों समेत ब्रह्मलोक को प्राप्त किया था उनधर्मात्मा भीम ने पितरों समेत सौ कुलों का उद्धार भी किया था। वह पवित्र शिला देवमयी है वहां पर लक्ष्मीपति विष्णु भगवान देवगणों के साथ सदा व्यक्ताव्यक्त रूप से विराजमान रहते हैं।

[इति श्री वायु महा पुराण का गया माहात्म्य नामक एक सौ आठवां अध्याय समाप्त ॥ १०८ ॥

एक सौ नौवां अध्याय

[गया माहात्य]

नारदजी बोले— हे सनत्कुमार जी! वहां पर (गया में) भगवान गदाधार व्यक्त रूप से किस तरह विराजमान हैं। वह गदा किस

प्रकार उत्पन्न हुई जिससे वे आदि गदाधर कहलाये ? सब पापों को हरण करने वाली उस गदा को चंचलता किस प्रकार मिली ?

सनत्कुमार जी बोले—बहुत पुराने समय की बात है कि एक 'गद' नाम का बज्र से भी कठोर असुर था। जिसने अपनी हड्डियां ब्रह्मा जी को उनके द्वारा माँगे जाने पर प्रदान करदीं। ब्रह्मा जी के कहने पर विश्वकर्मा ने उन हड्डियों की एक गदा बनाई। वह गदा बड़ी अद्भुत थी। उन हड्डियों की विश्वकर्मा ने बज्र को भी भेदन करने वाले यन्त्रों से काट छाँट कर सुन्दर गदा का निर्माण कर स्वर्ग में स्थापित किया। बहुत काल के बाद एकबार स्वायंभु मन्वन्तर में ब्रह्मनन्दन हेति नामक राक्षस ने कठोर तपस्या की। उसने एकलाख दिव्य वर्षों तक केवल वायु का भक्षण किया। एक पैर के अंगूठे पर खड़े होकर, मुँह और दोनों भुजाओं को ऊपर उठाकर शान्त चित से ध्यान में तत्पर रहा। उस समय उसने पुराने पेड़ों से गिरे पत्तों को खाया। फिर केवल वायु का ही आहार किया। इस तपस्या से प्रसन्न होकर ब्रह्मा एवं अन्य देवों ने उसे वरदान माँगने को कहा। उसने वरदान की याचना की कि मैं समस्त देवों दैत्यों तथा अनेक प्रकार के अस्त्र शस्त्रों, मनुष्यों, कृष्ण, शिव, सुदर्शन चक्र आदि किसी से भी न मारा जाऊँ। मेरे समान बलवान दूसरा कोई न हो। देवगण उस हेति की प्रार्थना को स्वीकार करके अन्तर्धान हो गये।

उसने इस वरदान से देवों को हराकर इन्द्र का पद भी छीन लिया। ब्रह्मा महादेव आदि इससे भयभीत होकर विष्णु भगवान की शरण में गये और बोले–हे प्रभो ! इस हेति का बध कीजिये। विष्णु ने देवों से कहा हे देववृन्द 'हेति' को समस्त देव एवं असुर भी नहीं मार सकते। मुझे कोई ऐसा महान अस्त्र दीजिये जिससे मैं उसे मार सकूँ। भगवान विष्णु के इस प्रकार कहने पर देवों ने वही गदा लाकर उन्हें प्रदान की। देवताओं की प्रार्थना पर देवपति विष्णु भगवान ने सबसे पहले उस गदा को धारण किया। उसी गदा से हेति को मारकर विष्णु भगवान देवताओं के साथ स्वर्गलोक को गये।

गयासुर को निश्चल करने के लिये ऊपर रखी गई शिला पर विष्णु भगवान ने इसी गदा को स्थित किया था। इसी कारण से भगवान का नाम गदाधर पड़ा। शिला पर्वत रूप से भगवान उस गयातीर्थ में व्यक्त हुये। शिला के अलावा मुण्डपृष्ठ गिरि, प्रभास उद्यन्त, गीतनाद, भस्मकूट, गृध्रकूट, प्रेतकूट आदिपाद, अरिविन्दक, पंचलोक, सप्तलोक, वैकुण्ठ, लोहदण्डक, क्रौंचपाद, अक्षयवट. फलगूतीर्थ, मधुश्रवा, दधिकुल्या, मधुकुल्या, देविका, महानदी, वैतरिणी आदि के रूप में भगवान गदाधर आदि व्यक्त हैं। विष्णु पद, रुद्रपद, उत्तमब्रह्मपद, दिव्यगुणयुक्त कश्यप पद जहां पर दो हाथ निकले हुये हैं, पंचाग्नियों के पद, इन्द्र के पद, अगस्त के पद, सूर्य के पद, कार्तकेय के पद, मातङ्ग के पद, और अनेक मुख्य लिंग वहां व्यक्ताव्यक्त रूप से विराजमान हैं। वहां गदाधार भगवान स्वयं इन रूपों में व्यक्त रूप से विद्यमान हैं। गायत्री, सावत्री, संन्ध्या, सरस्वती, गयादित्य, उत्तरार्क दक्षिणार्क, नैमिष, श्वेतार्क गणनाथ आठों वसुगण, मुनिगण ग्यारह रुद्रगण, सातों ऋषि सोमनाथ सिद्धेश, कपर्दीश, विनायक, नारायण, महालक्ष्मी, श्री पुरुषोत्तम, ब्रह्मा जी, मार्कण्डेयेश, कोटीश, अंगिरेश, पितामह जनार्दन, मंगला पुण्डरीकाक्ष इत्यादि रूप से गदाधर भगवान वहां विद्यमान हैं।

हेति नाम के राक्षस ने मृत्यु के बाद भगवान विष्णु के लोक को प्राप्त हुआ। गयासुर को निश्चल करने पर ब्रह्मा रुद्र इन्द्र इत्यादि सभी देवगण बहुत प्रसन्न हुये। गदाधर भगवान की सभी ने मिलकर इस प्रकार स्तुति की—

ब्रह्मा जी बोले— इस पुण्य गयाक्षेत्र में सभी गुणों से पले, पापों से विहीन, पूजित गदाधारण करने वाले, पर्वतराज हिमालय की गुफा में विराजमान रहने वाले भगवान विष्णु को मैं नमस्कार करता हूं देवों को विजय प्राप्त कराने वाले, दिन की शोभा, महादेवजी को यश देनेवाले दैत्यों का नाशकर देवताओं को प्रसन्न करने वाले कलि के घोर पापों को नाश कर यश बढ़ाने वाले कलियुगमें भी शोभा सम्पन्न, शरणागत रक्षक भगवान गदाधर को मैं प्रणाम करता हूं। परमपुष्टिमय भक्ति

रखने वाले भक्तजन जिसकी अधिक भक्ति से स्तुति करते हैं उन भगवान को, अद्भुत कर्म शील, परमविक्रम शील, अजन्मा होकर भी, शरीर होकर भी शरीर धारण करने वाले कठोर पाप कर्मों को नष्ट करने वाले पूज्यों में भी अग्रणी, पापियों को प्राप्त न होने वाले भगवान को हमारा नमस्कार है। जो वाणी एवं मन से अगोचर हैं, श्रेष्ठ वंशों में उत्पन्न हुये हैं, उन शरीर रहित, कारण एवं कलाओं से विहीन, अजन्मा, सूर्य की भांति कान्तिमान, ध्वनि मुख से रहित, अनादि परम ऐश्वर्यवान भगवान को हमारा नमस्कार है। मन से परे बुद्धि की गति से अगम्य, परात्पर, द्वैत रहित जिनकी विद्वान लोग सदा स्तुति करते हैं उन चित्स्वरूप कलि काल के कारणों से परे, हृदय में विराजमान गदाधर भगवान को हम नमस्कार करते हैं। सनत्कुमार बोले—देवताओं केसहित ब्रह्माजी के द्वारा इसप्रकार प्रार्थना एवं स्तवन करने पर भगवान विष्णु बोले—वरदान मांगिये। तब ब्रह्मा ने याचना की कि हे देव ! इस स्वरूपिणी शिला पर आपके बिना हम लोग नहीं रहेंगे। व्यक्त आदि स्वरूप सम्पन्न आपके साथ ही हम लोग सदा इस शिला पर रह सकते हैं। तब भगवान आदि गदाधर ने कहा कि ऐसा ही होगा। तभी से भगवान विष्णु लक्ष्मी जी के साथ वहां पर विराजमान हुये। वे भगवान समस्त लोकों के रक्षक, जगत जीवों को मुक्ति प्रदान करने वाले भगवान गदाधर पुण्डरीकाक्ष जनार्दन नाम से प्रसिद्ध हुये। श्वेत कल्प वेदों द्वारा अगम्य जो आदि भूत हैं और भगवान की व्यक्त मूर्ति थी वही भविष्य में बाराह कल्प के आने पर अदृश्य हो जायगी। लोक के उद्धार करने के लिये और देवगणों की रक्षा करने के लिये वह गयासुर के शिर पर स्थित होगी। जो मनुष्य सदा श्रद्धा सहित भगवान गदाधर का दर्शन प्राप्त करेंगे वे कुष्ठ आदि महान घोर रोगों से छूट कर निरोगी काया प्राप्त करेंगे बाद में वे विष्णु लोक को प्राप्त होंगे। जो मनुष्य भक्ति पूर्वक गदाधर का दर्शन करेंगे उनको धन, यश आयु और दीर्घायु प्राप्त होंगे। वे पुत्र पौत्रादि से सुख पाकर अक्षय फल प्राप्त करेंगे। जो गया तीर्थ में सुगन्धि युक्त पदार्थों को दान करेगा वह धन द्रव्य व सर्व सुखों को

प्राप्त होगा। उस स्थान पर पुष्प के दान करने से सौभाग्य प्राप्त होता है। दीपक दान करने से कान्ति प्राप्त होती है। ध्वजा के दान करने से पाप नष्ट हो जाते हैं। जो मनुष्य इस गया तीर्थ की यात्रा करेगा, वह ब्रह्मलोक को प्राप्त होगा। जो मनुष्य यहां श्राद्ध कर्म और पिण्ड-दान करते हैं वे अपने पितरों को विष्णु लोक में पहुँचाते हैं। जो व्यक्ति इस स्तोत्र को पढ़कर भगवान गदाधर को श्रद्धा पूर्वक स्तुति तथा पूजनादि करके प्रणाम करेगा, वह पितरों को स्वर्ग लोक में पहुँचायेगा।

शिवजी ने कहा— जो भगवान! अव्यक्त रूप धारण कर मुण्ड-पृष्ठ पर्वत पर और फल्गुतीर्थ में परमात्मा विष्णु को श्रद्धा सहित प्रणाम करेंगे, वे अनन्त अक्षय फल को प्राप्त होंगे। जो अव्यक्त रूप धारण करने वाले हैं वे भगवान विष्णु मुण्डपृष्ठ पर जनार्दन का रूप रख कर विद्यमान हैं हम उन जनार्दन भगवान को प्रणाम करते हैं जो देव स्वरूपिणी शिला पर ब्रह्मा इत्यादि देवों द्वारा पूजित होकर स्थित हैं, हम उन गदाधर भगवान का प्रणाम करते हैं।

सनत्कुमार बोले— हे नारद जी! इस प्रकार शिवजी द्वारा स्तुति करने के बाद गदाधर भगवान ब्रह्मा इत्यादि देवगणों के साथ वहाँ स्थित हुये। मुण्डपृष्ठ पर्वत पर स्थित गदाधर भगवान की जो पूजा, वन्दना और स्तुति करते हैं, वे इस मनुष्य लोक में सुख भोग कर अन्त में ब्रह्मलोक को प्राप्त होते हैं धर्म की इच्छा रखने वाले मनुष्य को धर्म प्राप्त होता है। अर्थ की इच्छा रखने वालों को धन प्राप्त होता है। राजा को युद्ध में विजय प्राप्त होती है। ब्राह्मण मनुष्य को सभी प्रकार की शिक्षाओं का शीघ्र ही ज्ञान प्राप्त होता है सन्तान हीन मनुष्य को सुन्दर विद्वान पुत्र प्राप्त होता है। जो मनुष्य गदाधर भगवान की भक्ति पूर्वक पूजा और स्तुति करते हैं वे इस लोक में सब सुख भोग कर वैकुण्ठ पद को प्राप्त करते हैं॥ १०६॥

[इति श्री वायु महा पुराण का गया माहात्म्य नामक एक सौ नवां अध्याय समाप्त हुआ]

एक सौ दसवां अध्याय

(गया माहात्म्य)

सनत्कुमार जी बोले—हे नारद जी ! अब मैं आपको गया यात्रा करने की विधि को बतलाऊँगा, वह मोक्ष प्रदान करने वाली है। प्राचीन समय में ब्रह्माजी ने कहा था कि गया तीर्थ के श्राद्ध कर्म करने से मोक्ष प्राप्त हो जाता है। गया यात्रा करने वाले मनुष्य को सबसे पहले कौपीन वस्त्र पहनना चाहिये और फिर गांव की परिक्रमा करके दूसरे गांव में जाकर श्राद्ध के बचे हुये अन्न का भोजन करे, फिर दान इत्यादि न लेकर प्रतिदिन यात्रा करे। प्रतिग्रह से बचकर, शुद्ध चित्त होकर इन्द्रियों को वश में रख कर पवित्रात्मा से गया की यात्रा करने से तीर्थ का वास्तविक फल प्राप्त होता है। जिसके हाथ पैर और मन वश में रहते हैं उसे धन, विद्या, तप और कान्ति प्राप्त होती है। गया क्षेत्र में घुसने से पहले महानदी के निर्मल स्वच्छ जल में स्नान करना चाहिये, फिर विधिविधान देवादिकों का तर्पण और श्राद्ध करके वेद मन्त्र का उच्चारण करना चाहिये। फिर दूसरे दिन शुद्ध होकर प्रेत पर्वत की यात्रा करनी चाहिये, फिर ब्रह्म कुण्ड में स्नान करके देवों के लिये तर्पण करना चाहिये। प्रेत पर्वत पर श्राद्धादि और पिण्डदान करने चाहिये। श्राद्ध कर्म दक्षिणाभिमुख होकर करना चाहिये। कव्य वाह, चन्द्रमा, यम, अग्नि, अर्यमा, अग्निष्वात्त, बहिषद् और सोमपान करने वाले पितृगण आप यहां पधारे ! मैं आप लोगों की कृपा से अपने सभी पितरगणों का श्राद्ध करने गया पुरी में आया हूँ। आप हमारे इस श्राद्ध कर्म से सन्तुष्ट होइये। इस प्रकार विनती करके आचमन करे, और पांचों अंगों सहित पांच प्राणायाम करके श्राद्ध कर्म को विधिवत् पूर्ण करना चाहिये। श्राद्ध के समय मंत्रों द्वारा पितरों का आवाहन करके पिण्डदान करना चाहिये। प्रेतशिला तीर्थ पर घृत सहित खीर का पिण्डदान करना चाहिये। श्राद्ध कर्म में मनुष्य जितने तिलों का दान करते हैं उतने ही सिंह मृगों से डर कर दूर भाग जाते हैं। सभी अष्टकाओं में, वृद्धि श्राद्ध में, गया तीर्थ में, मृत्यु के दिन

माता का श्राद्ध पिता के श्राद्ध के साथ ही करना चाहिये। वृद्धि श्राद्ध में पहले माता का श्राद्ध कर फिर पिता का श्राद्ध करना चाहिये। दक्षिणाभिमुख होकर कुश के आसन पर पिता के श्राद्ध के निमित्त पाद्यादि प्रदान करे। भली प्रकार कुशासन बिछाकर तिल सहित जल का दान करने के बाद दक्षिण दिशा से लेकर पिण्डों को श्राद्ध प्रदान करे। हाथ की अञ्जलि में पितृतीर्थों का जल लेकर उनको जल दान करना चाहिये। थोड़ा सत्तु लेकर अक्षय पिण्ड दान करना चाहिये। ब्रह्मा जी से लेकर स्तम्ब तक सभी देवगण हैं वे हमारे पितर गण हैं, वे इस जल दान से तृप्त हों, इस प्रकार कह कर जल दान करना चाहिये। पिता, पितामह, प्रपितामह, माता, मातामही, तथा प्रपितामही तथा उनके भी पिता जो हमारे पूर्व पुरुष हैं, उन्हीं सब के लिये मैं यह पिण्डदान कर रहा हूँ आप सब इससे सन्तुष्ट हो जाइये। जो व्यक्ति गया शिर पर हरे आंवले भर या शमी के पत्ते के समान पिण्डदान करता है वह अपने सात कुल के पितरों का उद्धार करता है। ये सात गोत्र माने जाते हैं पिता, माता, बहिन, अपनी स्त्री, पुत्री, बुआ, मौसी इत्यादि हैं। चौबीस, बीस, सोलह, बारह, ग्यारह, सात और आठ इतने क्रम पूर्वक पिण्डदान करने चाहिये। इस प्रकार दान करने से मनुष्य के सौ कुलों का उद्धार होता है। श्राद्ध कर्म में इस प्रकार विधि से पिण्डदान करना चाहिये। पिण्ड का आसन, पिण्डदान, पिण्डदान दक्षिणा और अन्नदान। पिण्डदान के पूर्व मनमें इस प्रकार संकल्प करना चाहिये कि अपने कुल के सभी मृतकों तथा नाना के कुल के सभी मृतकों को मैं इस कुशासन पर तिल मिश्रित जल द्वारा पिण्डदान कर रहा हूँ। इसके बाद पूजनादि करके फिर पिण्डदान करें। अपने कुल के मरे हुये लोगों की जिनकी गति नहीं हुई है, उनका उद्धार करने के लिये मैं यह पिण्डदान कर रहा हूँ। अग्नि में जल कर मर जाने वाले व्यक्ति हों, बिजली से मर जाने वाले व्यक्ति, चोर, डाकुओं से मारे जाने वाले व्यक्तियों के लिये मैं यह पिंडदान कर रहा हूँ। जो बिना दांत निकले

ही मर गये हों, अचानक दीवार से गिर कर दबने से मृत्यु हो गई हों, कुए में गिर कर मर गये हों, नशीली या मादक वस्तु के प्रयोग करने से मर गये हों, किसी ने अपहरण करके मार डाले हों या सफर करने में मर गये हों या जो गर्भ में ही मर गये बन में अग्नि से जलकर मर गये. सिंह और व्याघ्र से मारे जाने वाले, फांसी से मरने वाले, आत्म हत्या करके मरने वाले, भूख प्यास से तड़प कर मरने वाले, भूत प्रेत और पिशाचों के मारे जाने वाले व्यक्तियों के उद्धार करने के लिये मैं यह श्राद्ध कर्म में पिंडदान कर रहा हूं। रौरव, अन्धनामिस्त्र कालसूत्र, असिपत्र वन, कुम्भीपाक इत्यादि नरकों से अपने पितरों का उद्धार करने के लिये ही मैं यह पिंडदान कर रहा हूं। पशु योनि में उत्पन्न होने वाले नीच पक्षी, कीट, सरकने वाले सर्प, वृक्षों की योनि में उत्पन्न होने वाले तथा और अनेक जातियों में उत्पन्न होने वाले पितरों के उद्धार के लिये मैं यह कर्म कर रहा हूँ। पिता के वंश में मरने वाले तथा माता के वंश में मरने वाले जिनके स्त्री पुत्रादि न हों, जिसके कोई बन्धु बान्धव न हों. अन्धे, लँगड़े हों, कुरूप हों, उन सबके उद्धार के लिये मैं यह पिंडदान कर रहा हूं। इस प्रकार इन शब्दों में कह कर माताओं के लिये स्त्रीलिंग लगाकर पिंडदान करना चाहिये। अपने गोत्र के तथा किसी दूसरे गोत्र के स्त्री पुरुष के लिये अलग अलग पिंडदान करने की रीति है। पिंड रखने के वर्तन में तिल छोड़कर और पवित्र जल से सिंचन करके इन मन्त्रों का उच्चारण करके, परिक्रमा करके पिंडदान करना चाहिये। तीनबार सिंचन के बाद प्रणाम करके पिंडदान करना चाहिये। पितरों को विसर्जित करके हाथ जोड़कर आचमन करके देवताओं से इस प्रकार कहना चाहिये ब्रह्मा, शिव इत्यादि देवगण इस कार्य के साक्षी हैं कि मैं गया तीर्थ में आकर पितरों के श्राद्ध कर्म को सम्पन्न कर चुका हूं। हे गदाधर भगवान्! मैं सिर्फ इसी कार्य के लिये ही गया तीर्थ में आया था। इसी प्रकार तीर्थयात्रा में जाकर पिंडदान करना चाहिये। मैं अपने ऋण से मुक्त हो गया हूं। हे नारद जी! सबसे पहले

प्रेत पर्वत पर श्राद्ध कर्म करें, फिर अन्य पवित्र स्थान में श्राद्ध कर्म को पूर्ण करें। प्रेत पर्वत पर सत्तु तिल मिलाकर दान करने से पितरों को अक्षय फल प्राप्त होता है। हमारे कोई भी पितरगण प्रेत योनि में पड़े हों, वे इस तिल सत्तु के दान से सन्तुष्ट होकर ब्रह्मलोक को प्राप्त करेंगे। गया शिर में यह प्रेत शिला प्रेतों की मुक्ति करने वाली है और इसमें श्राद्ध करने से कोई भी मनुष्य प्रेत योनि में नहीं जाता। इस पवित्र तीर्थ में गदाधर भगवान अन्य देवगणों के साथ वहां स्थित हैं ॥११०॥

[इति श्री वायु महा पुराण का गया माहात्म्य नामक एकसौ दसवां अध्याय समाप्त हुआ]

एक सौ ग्यारहवां अध्याय

(गया माहात्म्य)

सनत्कुमार बोले—हे नारद जी! अब मैं आपको उत्तर मानस तीर्थ में किस प्रकार श्राद्ध कर्म सम्पन्न करना चाहिये। मैं आपके इसके विषय में बतला रहा हूं। हाथ धोकर आचमन करके हाथ में कुशा लेकर शिर पर जल से छींटे मारे। फिर उत्तर मानस तीर्थ की यात्रा करे। वहां जाकर इस मन्त्र को पढ़ कर स्नान करके आत्मा शुद्ध करने के लिये मैं उत्तर मानस तीर्थ में स्नान कर रहा हूँ। सूर्य आदि देवों की सिद्धियां प्राप्त करने के कारण तथा अपने पितरों का उद्धार करने के लिये मैं इस पवित्र तीर्थ में स्नान कर रहा हूँ। स्नान कर तर्पण करके पिण्डदान करना चाहिये। यहां पर मानस नामक सरोवर स्थित है, इसी कारण इस तीर्थ का नाम उत्तर मानस पड़ा है। उस स्थान पर जो मनुष्य सूर्यदेव को प्रणाम करके पूजन करता है उस कर्म से प्रसन्न होकर उसके पितरगण सूर्यलोक को प्राप्त होते हैं। इसके बाद सभी देवों को ब्रह्मा जी विष्णु, चन्द्रमा, सूर्य, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु, केतु को प्रणाम करके मौन व्रत धारण करके उत्तर मानस से दक्षिण मानस की यात्रा करनी चाहिये। वह उदीची का तीर्थ है और औदिच्य तीर्थ नाम से प्रसिद्ध है वह तीर्थ मोक्ष प्रदान करने वाला है।

इस तीर्थ में स्नान करने से मनुष्य सशरीर स्वर्ग को प्राप्त करता है इसके मध्य भाग में कनखल नामक तीर्थ बसा हुआ है वहां स्नान करने से मनुष्य सुवर्ण की तरह कान्तिवान शरीर को प्राप्त करता है। इन तीर्थों में विधि पूर्वक स्नान करके श्राद्ध कर्म करना चाहिये।

हे सूर्य देव मैं इस तीर्थ में स्नान कर रहा हूँ और फिर सूर्यादि देवों को प्रणाम करके पूजा करे। मैं आपको प्रसन्न करने के लिये नमस्कार करता हूं तथा अपने पितरों के तारने के लिये भी आपको प्रणाम करता हूं। इसके बाद फल्गु तीर्थ में स्नान करने से पुत्र, पौत्रादि, धन धान्य, आरोग्य और दीर्घायु के लिये मैं आप सब देवों को प्रणाम करता हूँ। ब्रह्मा जी के अनुरोध पर विष्णु भगवान इस फल्गु तीर्थ में स्थित हुये। यज्ञ की दक्षिणाग्नि में पड़ा हुआ रज फल्गु तीर्थ के रूप में प्रसिद्ध हुआ। फल्गु तीर्थ तो स्वय भगवान गदाधर स्वरूप है। गंगा से अधिक महात्म्य इस तीर्थ के स्नान करने से होता है। इसके स्नान करने से इतना फल प्राप्त होता है, जितना कि एक लाख अश्वमेध यज्ञ करने पर भी नहीं होता है। इस तीर्थ में स्नान कर मनुष्य को पिण्डादि दान करना चाहिये। पितामह को प्रणाम करके पूजा आदि करनी चाहिये। फल्गु तीर्थ में स्नान करने से मनुष्य अपने दस पीढ़ी पूर्व दस पीढ़ी बाद में होने वालों का उद्धार करता है। वासुदेव, सङ्कर्षण, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध, श्रीधर इत्यादि सभी देवों को हम प्रणाम करते हैं।

जो मनुष्य पंचामृत में स्नान करा कर सुन्दर फल फूल तथा वस्त्रों को पहना कर गदाधर भगवान की पूजा करते हैं। उनको स्वर्गलोक प्राप्त होता है। दूसरे दिन धर्मारण्य की यात्रा करनी चाहिये। इसी धर्मारण्य तीर्थ में प्रजापति ब्रह्माजी ने यज्ञ का अनुष्ठान किया था हे। नारद जी इस धर्मारण्य तीर्थ में पिन्डदान करने से मनुष्य को मोक्ष प्राप्त होता है। इसके बाद मतंग में स्नान करना चाहिये, और मतंगेश को प्रणाम करके पितरों के उद्धार के लिये इस तीर्थ में पिन्डदान करने चाहिये। वहाँ पर धर्म धर्मेश्वर को प्रणाम करके

महाबोधि वृक्ष को प्रणाम करना चाहिये। ब्रह्मा, विष्णु और शिव स्वरूप, अश्वत्थराज, बोधिवृक्ष को हम प्रणाम करते हैं। मैं अपने पितरों का उद्धार करने के लिये यहां श्राद्धादि कार्य सम्पन्न कर रहा हूँ। हे वृक्षराज! इस गया तीर्थ में आकर मैं आपकी कृपा से सब पापों से छूट गया हूँ। तीसरे दिन ब्रह्म सरोवर में स्नान करना चाहिये सभी प्रकार से विधि पूर्वक पिण्डदान करके इस प्रकार कहे कि हे देव! मैं आपकी कृपा से तीनों ऋणों से मुक्त हो गया हूँ। इस प्रकार कूप और यूप के मध्य भाग में श्राद्ध कर्म को पूर्ण करे। ब्रह्म सरोवर में श्राद्ध करके मनुष्य अपने सभी पितरों का उद्धार करता है। यूप की परिक्रमा करने से बाजपेय यज्ञ के फल के समान फल प्राप्त होता है। अजन्मा ब्रह्मा जी को हम प्रणाम करते हैं। ब्रह्म सरोवर के पास आम के वृक्ष लगे हुये हैं, वे सभी आम के वृक्ष ब्रह्ममय हैं। वे स्वयं भगवान विष्णु के स्वरूप हैं। उनकी इस प्रकार प्रार्थना करके कि–मैं पितरों के उद्धार के लिये आप सब देवों को प्रणाम करता हूँ। इसके बाद यमराज को बलिदान करना चाहिये। धर्मराज और यमराज ये दोनों देव गयासुर को निश्चल करने के लिये यहां स्थित हुए हैं। मैं अपने पितरों की मुक्ति की इच्छा से उन दोनों को बलि प्रदान करता हूँ। इसके बाद कुत्तों को बलि देनी चाहिये। वैवस्वत कुल में उत्पन्न होने वाले दोनों कुत्ते श्यामल रंग के तथा चितकबरे हैं। मैं पितरों के उद्धार के लिये उन दोनों को बलि दे रहा हूं। चारों दिशाओं में रहने वाले वायस गणों को मैंने पिण्डदान किया है। चौथे दिन फिर फल्गु तीर्थ में स्नान करना चाहिये। फिर गयाशिर पर स्थित विष्णु पद पर पिण्डदान करना चाहिये। वहां पर गयासुर का साक्षात शिर भाग स्थित है। यह फल्गु तीर्थ उसी पर स्थित है। नाग, जनार्दन, ब्रह्म यूप और उत्तर मानस तक यह गयाशिर माना जाता है इसी कारण इसको फल्गु तीर्थ कहते हैं।

यहां पर गदाधर भगवान स्थित हैं। पितरों को मोक्ष प्रदान करने के लिये वहां विष्णु, ब्रह्मा, रुद्र आदि देवगणों के चरण चिन्ह स्थित हैं। उस दिव्य विष्णु पद का दर्शन करने से घोर पापों का नाश होता है। उस स्थान पर दान करने से अक्षय फल की प्राप्ति होती है। विष्णु पद पर पिण्डदान करने से मनुष्य के सौ कुलों का उद्धार होता है। रुद्र के चरण पद पर श्राद्ध करने वाला मनुष्य भी अपने सौ कुलों का उद्धार करते हैं। इसी प्रकार ब्रह्मा जी के चरण पद पर श्राद्ध कर्म सम्पन्न करने से सौ कुल के पितर गणों का उद्धार होता है और आप ब्रह्मलोक को प्राप्त होता है। कश्यप के चरण प्रान्त पर श्राद्ध कर्म करने से ब्रह्मलोक प्राप्त होता है। गार्हपत्य के चरण प्रान्त में श्राद्ध कर्म करने से बाजपेय यज्ञ का फल प्राप्त होता है। आहवनीय अग्नि पद में श्राद्ध कर्म करने से अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होता है। शुक्र के चरण प्रान्त में श्राद्ध करने से पितरों को ब्रह्मलोक प्राप्त होता है। अगस्त्य के चरण पद पर श्राद्ध करने से इन्द्रलोक प्राप्त होता है। सूर्य के चरण पर श्राद्ध करने से पितरगण सूर्यलोक को प्राप्त होते हैं। कार्तिकेय के चरण प्रान्त पर श्राद्ध करने से शिव लोक प्राप्त होता है। गणेश के चरण प्रान्त में श्राद्ध करने से पितर शिव लोक को जाते हैं। गज कर्ण नामक तीर्थ में तर्पण करने से मनुष्य स्वर्गलोक को प्राप्त होता है। इसी प्रकार सभी देवों के चरण प्रान्त में श्राद्ध कर्म सम्पन्न करने से मनुष्य के पितरगण स्वर्गलोक को प्राप्त करते हैं। इन सभी चरण प्रान्तों में ब्रह्माजी, विष्णु, रुद्र, कश्यप के चरण प्रान्त श्रेष्ठ माने जाते हैं। हे मुनि! गया तीर्थ में यात्रा के शुरू और अन्त में श्राद्ध कर्म करने का विधान माना गया है।

प्राचीन समय में कश्यप जी के चरण प्रान्त में भारद्वाज ऋषि श्राद्ध कर्म सम्पन्न कर रहे थे, उसी समय वे पिण्डदान देने

के लिये तैयार हुऐ दो श्यामल और गौरवर्ण के दो हाथ बाहर निकले आये। भारद्वाज दोनों हाथों को इस प्रकार बाहर निकले देखकर आश्चर्य में पड़ गये और अपनी माता शान्ता से पूछने लगे हे माता! कश्यप के चरणों में ये कृष्ण और गौरवर्ण के दो हाथ निकले हुये हैं, मैं किस हाथ पर पिण्डदान करूँ, आप मुझ को अच्छी तरह बतलाइये, क्योंकि आप इन सब के बारे में अच्छी तरह से जानती हो, अतः मेरे इस भ्रम को दूर कीजिये।

शान्ता बोली— हे भारद्वाज! तुम काले रंग के हाथ पर पिण्डदान करो, माता की आज्ञा पाकर भारद्वाज ने उसी श्यामल हाथ पर पिण्डदान किया, तो उसी समय श्वेत रंग का हाथ अन्तर्धान हो गया, और कहने लगा कि तू तो मेरा औरस पुत्र है अतः तू मुझ को पिण्डदान कर। कृष्ण हाथ ने कहा कि तू मेरा क्षेत्रपुत्र है मुझे पिण्डदान दो। तब उनकी माता ने कहा कि हे पुत्र दोनों के हाथ पर पिण्डदान करो। तब ऋषि भारद्वाज ने कश्यप के चरण प्रान्त में पिण्डदान किये। उसके माहात्म्य से वे दोनों ब्रह्मलोक को प्राप्त हुये। इसी प्रकार जब रामचन्द्रजी दशरथजी के लिये रुद्र के चरण प्रान्त पर पिण्डदान करने लगे तो उनके पिता दशरथ जी स्वर्ग से हाथ फैलाकर आ गये, लेकिन रामचन्द्रजी ने उनके हाथ पर पिंडदान नहीं किया उन्होंने रुद्र के चरण में पिंडदान किये। मर्यादाभंग होने के डर से दशरथ जी ने रामचन्द्रजी से कहा कि हे पुत्र! तुमने मेरा उद्धार कर दिया अब मैं शिवलोक को जा रहा हूँ और तुम भी अनन्त समय तक राज्य सुख, तथा सभी प्रजा ब्राह्मणों इत्यादि का पालन और अनेक यज्ञों का अनुष्ठान करके विष्णु लोक को प्राप्त करोगे। इस प्रकार कह कर राजा दशरथ जी रुद्र लोक को चले गये।

भीष्मजी जब विष्णुपद पर पिंडदान करने को तयार हुये, तो राजा शन्तनु के दोनों हाथ भी बाहर निकल आये। किन्तु उन्होंने भी हाथ पर पिंडदान नहीं किया और विष्णु के चरणों पर ही पिंडदान किया। उनके इस प्रकार पिंडदान करने से शन्तनु को बहुत प्रसन्नता

हुई और उन्होंने पुत्र से कहा हे पुत्र ! तुम धर्म की मर्यादा का पालन करने वाले हो तुम विष्णु लोक को प्राप्त हो ओगे। इसके बाद कनकेश, केदार, नारसिंह और वामन भगवान की भलीप्रकार पूजा कर के पिंडदान करके पितरों का उद्धार करना चाहिये। गयाशिर में जाकर मनुष्य जिनके नाम लेकर पिंडदान करता है उनके वे पितरगण नरक से स्वर्ग में चले जाते हैं। असुर राज हेति के शिर को भगवान गदाधर ने दो भागों में बांट दिया था, और वहीं भगवान ने गदा को धोकर स्वच्छ किया था। इसी कराण उस तीर्थ में श्राद्ध कर्म करने से मुक्ति प्राप्त होती है सभी पवित्र तीर्थों में वह तीर्थ स्थान है वह तीर्थ स्थान गदालोल के नाम से भी प्रसिद्ध है उस गदालोल नामक महातीर्थ में गदा धोने का ही माहात्म्य है।

उस गदालोल तीर्थ में स्नान करके यह विचार करें कि मैं अपनी सिद्धि प्राप्त करने के लिये तथा पितरों का उद्धार करने के लिये इस पवित्र गदालोल नामक तीर्थ में स्नान कर रहा हूँ। मुझे अक्षय फल की प्राप्ति हो। इस तरह पांचवें दिन गदालोल नामक तीर्थ में स्नान करके पिंडदानादि कार्य सम्पन्न करने चाहिये। इस प्रकार पिंडदान करने से मनुष्य को ब्रह्मलोक प्राप्त होता है। श्राद्ध कर्म के बाद ब्राह्मणों को हव्य कव्यादि से तृप्त करना चाहिये। क्यों कि उनके तृप्त होने से ही समस्त देवगण पितरगण सन्तुष्ट होते हैं। अक्षय वट में विविध प्रकार के अन्य और पकवानों से श्राद्ध करने वाला मनुष्य अक्षय फल को प्राप्त करता है। वटवृक्ष के पास शाक, फलफूल मूल अथवा जल से एक ब्राह्मण को भी भोजन कराने से करोड़ों ब्राह्मणों के भोजन का फल प्राप्त होता है। गयातीर्थ के विद्वान पुरोहितों को सोलह प्रकार का दान देना चाहिये। पुत्रों सहित उनकी विविध प्रकार से पूजा करनी चाहिये। इस सम्पूर्ण संसार के समुद्र रूप में बलदने पर भगवान विष्णु वटवृक्ष के एक पत्ते पर बालक रूप में योनि निद्रा धारण कर शयन करते हैं। हम अक्षय वृह्मपद करने वाले वटवृक्ष को नमस्कार करते हैं। जो मनुष्य शिव के भक्त होकर कलियुग में

निवास करते हैं, उन्हीं के लिये भगवान गदाधर सब स्थान पर लिंग रूप में स्थित हैं। उन गदाधर भगवान को हम प्रणाम करते हैं ॥ १११

[श्री वायु महो पुराण का गया माहात्म्य नामक एक सौ ग्यारहवां अध्याय समाप्त]

एक सौ बारहवां अध्याय

[गया माहात्म्य]

सनत्कुमारजी बोले—हे नारद जी गय राजा ने अपने राज्य काल के समय बहुत यज्ञों का अनुष्ठान किया, उन सब यज्ञों में प्रचुर अन्न और दक्षिणा में द्रव्य का व्यय किया। जितने आकोश में तारे हैं उतने ही रत्न और सुवर्ण की मुद्राऐं ब्राह्मणों को दक्षिणा में दीं। सभी प्रदेशों के रहने वाले विद्वान पुरुष उन की यशोगाथा का गान करते हैं। उनके इस पुण्य कार्य से सभी देवगण प्रसन्न होकर उन से बोले कि हे राजा गय ! तुम हमसे कोई वरदान मांगो इस प्रकार देवों के कहने पर राजा गय ने कहा हे देवगणो ! यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो मुझे यह वरदान दीजिये कि जिन यज्ञों में प्रजापति ब्रह्माजी ने जिन जिन ब्राह्मणों को शाप दिया था, वे आज से सब यज्ञों में पूजे जांय और पवित्र होकर निवास करें। ब्रह्मपुरी की तरह इस पुरी का नाम मेरे नाम के ऊपर ही पड़े। सभी देवों ने कहा कि हे राजा ! तुमने जिस प्रकार कहा है वैसा ही होगा। इस प्रकार कह कर सभी देवता अपने अपने लोक को चले गये। इस के बाद सर्व सुख प्राप्त करके वह गय राजा विष्णु धाम को चला गया। इसके बाद विशाला नामक नगरी में विशाल नाम का एक राजा पैदा हुआ। उस राजा के कोई सन्तान न थीं उसने ब्राह्मणों से कहा कि महोराज मुझे पुत्र प्राप्ति के लिये कोई उपाय बतलाइये। ब्राह्मणों ने राजा से कहा कि हे राजन् ! यदि आप गया में जाकर पिंडदान करें तो आप के निश्चय ही पुत्र पैदा होगा। तब राजा विशाल ने गया में पिंडदान करके पुत्र प्राप्त किया। राजा विशाल ने आकाश में श्वेत वर्ण, रक्त वर्ण और कृष्णवर्ण के तीन पुरुषों को देखा, फिर राजा ने उन पुरुषों

से पूछा कि तुम कौन हो, श्वेतवर्ण के पुरुष ने कहा कि मैं तुम्हारा पिता हूं, मैं इन्द्र लोक से आया हूं और यह रक्त वर्ण वाले हमारे पिता हैं इन्होंने ब्रह्महत्या की, जिसके कारण ये महान पापी हैं और कृष्ण वर्ण वाले हमारे पितामह हैं। इन्होंने बहुत से ऋषियों की हत्या की थी, ये दोनों अवीची नामक नरक में दुखभोग रहे हैं। यदि तुम इन को पिण्डदान करो तो इनको मुक्ति मिल जायगी। तब राजा ने उन दोनों के निमित्त पिण्डदान करके उनको मोक्ष दिलाया। इस प्रकार विचार करके जो जल दान करता है उसके सभी पितरगण तृप्त होकर स्वर्ग लोक को प्राप्त होते हैं। इस प्रकार वे तीनों स्वर्ग लोक को चले गये। सभी पुत्रों को अपने पितरों को इस प्रकार सन्तुष्ट करके मोक्ष दिलानी चाहिये। इस प्रकार विशाल राजा अनन्त समय राज्य सुख-भोग कर स्वर्ग लोक को चले गये।

प्रेतराज अनेक प्रेतों के साथ स्वर्ग लोक को गये, एक प्रेत ने अपने उद्धार के लिये एक बनिये से कहा हमारे नाम से यदि गयाशिर पर पिण्डदान करोगे तो हमारी प्रेत योनि छूट कर हमको मोक्ष मिल जायगा। तुम मेरे सब धन को लेकर गया में जाकर श्राद्ध करो। प्रेत ने अपने गोत्रादिक भी बतला दिये। प्रेत के अनुरोध करने पर बनिये ने अपने परिवार के साथ गयाशिर के तीर्थ की तीर्थ यात्रा की और प्रेत के निमित्त पिण्डदान किया। इस प्रकार बनिये के पिण्डदान करने पर प्रेत प्रेतियोनि से छूट गया और बनिया श्राद्ध कर्म सम्पन्न करके अपने घर लौट आया। इस प्रकार गय, शम्भु, विष्णु और सूर्य के क्षेत्र में पिण्डदान करने का फल होता है। गायत्री तीर्थ में व्रत करके गायत्री के सामने स्नान करके प्रातः कालीन संध्या का ध्यान करना चाहिये। इसके बाद फिर गायत्री के सामने स्नान करके मध्याह्न की संध्या का ध्यान करना चाहिये। इस प्रकार ध्यान करने से मनुष्य को स्वर्ग प्राप्त होता है।

मध्याह्न संध्या के बाद मोक्ष प्राप्ति की इच्छा से पितरों के लिये पिन्डदान करना चाहिये। इसके बाद प्राची सरस्वती में स्नान करके सायंकालीन संध्या का ध्यान करना चाहिये। इस प्रकार करने से मनुष्यों के पितरगण स्वर्गलोक को जाते हैं। तीनों समय संध्याओं के करने वाले के सभी पाप कर्म नष्ट हो जाते हैं। इसके बाद मुन्ड पृष्ठ पर्वत, गिरि कर्ण मुख, देवनदी, वैतरणी पुण्य तीर्थों में स्नान करके पिन्डदान करना चाहिये, वैतरणी में स्नान करके गौदान करने वाला व्यक्ति अपने इक्कीस कुलों का उद्धार करता है। गया क्षेत्र में पितरों का उद्धार करने के लिये वैतरणी नदी प्रवाहित हुई है। इस पुण्य तीर्थ की यात्रा करके तीन दिन का उपवास करना चाहिये जो मनुष्य यहां आकर सुवर्ण दान करता है तथा गौदान करता है वह महान धनवान होता है। घृत कुल्या, मधु कुल्या, देविका, महानदी तथा शिला के संगम पर मधुश्रवा स्थित हैं। इन सब तीर्थों में स्नान करने से मनुष्य को दस हजार अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होता है। इस स्थान पर श्राद्ध कर्म और पिण्डदान करने से मनुष्य के सौ कुलों के पितरों का उद्धार होजाता है और वे सब विष्णु लोक को प्राप्त होते हैं। दशाश्वमेध, हस तीर्थ, अमरकंटक, कोटितीर्थ, रुक्म कुंड, मार्कन्डेय कोटीश्वर को प्रणाम करते हैं। एक समय रुक्म पारिजात नामक बन में श्री भगवान शंकर पार्वती जी के साथ क्रीड़ा कर रहे थे, संयोगवश उसी बन में मरीचि ऋषि फल फूलादि लेने गये। अपने सुख में बाधा देख कर महादेव ने मरीचि ऋषि को शाप दे दिया कि तुम दुख पाओगे। शाप से भयभीत होकर मरीचि ने शंकर जी की स्तुति की, स्तुति से प्रसन्न होकर शिवजी ने कहा कि तुम कोई वरदान मांगो। मरीचि ने शिवजी से कहा कि भगवान यह वरदान दीजिये, जिससे कि इस शाप से मेरी मुक्ति हो जाय। शिव जी ने कहा तुम गया तीर्थ की यात्रा करोगे तो तुम्हारा शाप मिट जायगा। शिव के इस प्रकार कहने पर मरीचि ऋषि ने गया की यात्रा की उन्होंने वहां आकर शिला पर खड़े होकर कठिन

तपस्या की। महादेव जी के शाप से मरीचि कृष्ण वर्ण के हो गये थे लेकिन अपनी तपस्या के प्रभाव से फिर वह गौर वर्ण के हो गये। विष्णु ने मरीचि ऋषि से कहा तुम मुझसे कोई वरदान मांगो। मरीचि ऋषि ने भगवान के इस प्रकार कहने पर उनसे कहा—हे भगवान् यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो मैं आपकी भक्ति ही चाहता हूँ इस शिला पर तप करने से मैं महादेव जी के शाप से छूट गया हूं। वह शिला बहुत पवित्र है। तथा पितरों को मोक्ष प्रदान करने वाली है। मरीचि ऋषि की स्तुति सुनकर भगवान अपने लोक को चले गये। स्वर्ग में निवास करने वाले देवताओं की पुष्करणी नदी मनुष्य को पवित्र कर देती है वहां पर दान करने से अक्षय फल प्राप्त होता है। वहां पर पवित्र पाण्डु शिला भी स्थित है उस पाण्डु शिला पर श्राद्ध करने से अक्षय फल प्राप्त होता है। हे नारद जी! प्राचीन समय में जब युधिष्ठिर उस शिला पर श्राद्ध करने गये, तो स्वयं पाण्डु ने आकर अपने हाथों में पिण्डदान मांगा, लेकिन उन्होंने हाथ को छोड़ कर शिला पर ही पिण्ड प्रदान किया, शिला पर पिण्डदान करने से पाण्डु को बहुत तृप्ति हुई। उन्होंने पुत्र को बरदान दिया कि हे पुत्र! इस समस्त पृथ्वी पर तुम अनन्त समय तक राज्य करो, तुमने मेरा उद्धार किया है। तुम अपने भाइयों के साथ स्वर्ग प्राप्त करोगे। ब्रह्मा जी ने विष्णु आदि देवगणों के साथ शमी के गर्भ से मथ कर अग्नि पैदा की, इसीलिये वह तीर्थ तीनों लोकों में प्रसिद्ध है। गया में वृषोत्सर्ग करने से मनुष्य के इक्कीस कुलों के पितरों का उद्धार होता है। संगम तीर्थ में स्नान करने से मनुष्य सब पापों से छूट कर मोक्ष प्राप्त करता है। वशिष्ठ ऋषि ने यहां पर अश्वमेध यज्ञ किया था, उस यज्ञ से भगवान शंकर जी प्रकट हुए। वे वशिष्ठ ऋषि से बोले कि तुम कोई वरदान मांगो, तब शंकर जी ने कहा कि ऐसा ही हो यह कह कर अन्तर्धान हो गये। वशिष्ठ ने शंकर जी से कहा कि इसी स्थान पर निवास करें। धेनुकारण्य तीर्थ के कामधेनु के पद पर पिण्डदान करने से मनुष्य पितरों के

ऋण से मुक्त हो जाता है वहां पर फल्गु, चन्डी, शवशानाक्षी और मंगला आदि देवियों की पूजा करनी चाहिये उस स्थान पर गदाधर भगवान का ध्यान करके श्राद्ध कर्म और पिण्डदान करने से मनुष्य के सौ कुलों का उद्धार होता है। गयाग्य, गयादित्य, गायत्री, गदाधर, गया, गयासुर आदि छः पवित्र स्थान मुक्ति देने वाले हैं। जो मनुष्य इस गया क्षेत्र की पवित्र कथा पढ़ता तथा सुनता और दूसरों को सुनाता है वह मोक्ष को प्राप्त होता है। जो मनुष्य एकाग्र शुद्ध पवित्र चित्त से गया की महिमाओं का वर्णन सुनता है वह अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त करता है। जो मनुष्य गया व्याख्यान की इस पुस्तक को पढ़ता तथा लिखता है उसके घर में सदा लक्ष्मी बिराजमान रहती है। हे नारद जी! गया के इस उत्तम कथा को सुनने से चोर, सर्प, अग्नि, भूत, प्रेत आदि किसी का डर नहीं रहता है यह गया तीर्थ सारे त्रैलोक्य में प्रसिद्ध है और सारे संसार भर के तीर्थ यहां विद्यमान हैं। हे मुनि! इस गया तीर्थ के विषय में जितना जानता था मैंने आपको बतला दिया।

सूत जी बोले—इस प्रकार उस पुण्य कथा को सुनाने के बाद श्रद्धा सहित हर्षित होकर भगवान सनत्कुमार को साष्टाङ्ग प्रणाम करके सम्पूर्ण नारदादि ऋषिगण अपने अपने स्थान को प्रस्थान कर गये।

[इति श्री वायु महापुराण का गया माहात्म्य नाम का एकसौ बारहवां अध्याय समाप्त]

❀ सम्पूर्ण भाषाबद्ध वायु महा पुराण समाप्तम् ❀

मुद्रक—पं० गजराजसिंह शर्मा द्वारा श्री गोपाल प्रेस, हाथरस में मुद्रित।